साइकिल की कहानी

विजय गुप्ता

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

साइकिल की कहानी

विजय गुप्ता

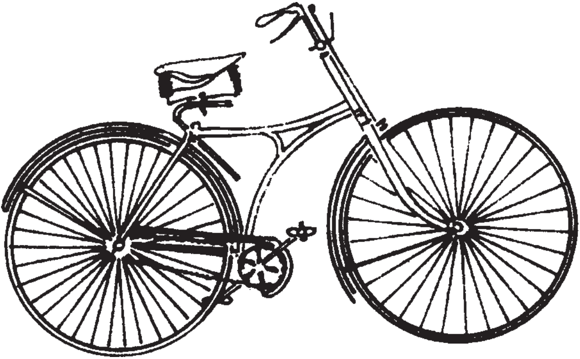

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

नव जनवाचन आंदोलन

इस किताब का प्रकाशन भारत ज्ञान विज्ञान समिति ने 'सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट' के सहयोग से किया है। इस आंदोलन का मकसद आम जनता में पठन–पाठन संस्कृति विकसित करना है।

साइकिल की कहानी	**The Story of Bicycle**
विजय गुप्ता	***Vijay Gupta***
हिंदी अनुवाद	***Hindi Translation***
अरविंद गुप्ता	Arvind Gupta
कॉपी संपादक	***Copy Editor***
राधेश्याम मंगोलपुरी	Radheshyam Mangolpuri
रेखांकन	***Illustration***
श्री वीरेन्द्र	Shri Virendra
ग्राफिक्स	***Graphics***
अभय कुमार झा	Abhay Kumar Jha
कवर	***Cover***
गॉडफ्रे दास	Godfrey Das
प्रथम संस्करण	***First Edition***
मई 2007	May 2007
सहयोग राशि	***Contributory Price***
30 रुपये	Rs. 30.00
मुद्रण	***Printing***
सन साइन ऑफसेट नई दिल्ली – 110 018	Sun Shine Offset New Delhi - 110 018

Publication and Distribution

Bharat Gyan Vigyan Samiti

Basement of Y.W.A. Hostel No. II, G-Block, Saket , New Delhi - 110017

Phone : 011 - 26569943, Fax : 91 - 011 - 26569773

Email : bgvs_delhi@yahoo.co.in, bgvsdelhi@gmail.com

BGVS MAY 2007 2K 2500 NJVA 0003/2007

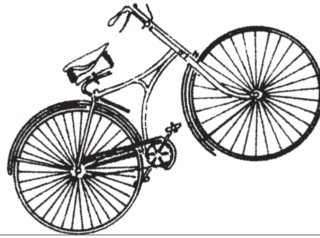

विषय-सूची

1. एक शानदार मशीन 7
2. साइकिल के हिस्से 22
3. साइकिल का विज्ञान 42
4. कुछ रोचक वेबसॉइट्स 58
5. साइकिल के इतिहास की समय-रेखा 59

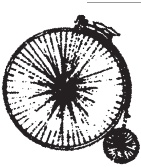
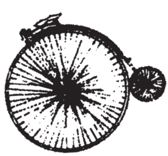

यह पुस्तक : एक परिचय

इस पुस्तक में साइकिल के क्रमिक विकास की कहानी का बेहद रोचक वर्णन है। साइकिल बल्ली पर लगे दो पहियों से शुरू हुई और धीरे-धीरे करके अब यह यातायात और तफरीह का एक बहुत कार्यकुशल साधन बन गई है। साइकिल में शुरुआत से अब तक हुए डिजाइन परिवर्तनों को इस पुस्तक में दर्शाया गया है। डिजाइन का यह विकास सामान्यतः काफी धीमी गति से हुआ, परंतु कभी-कभी इसमें ऊंची छलांगें भी लगीं। इस प्रकार हरेक विकास के चरण के बाद साइकिल में कुछ बेहतरी आती गई।

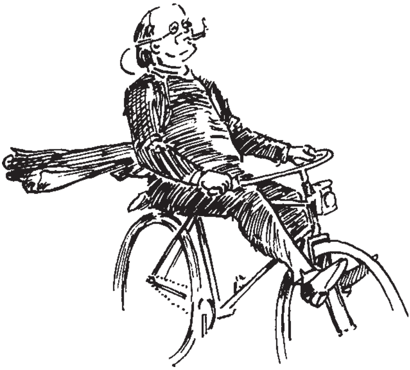

पुस्तक एक जानी-पहचानी मशीन के उदाहरण द्वारा इंजिनियरिंग के आवश्यक सिद्धांतों से परिचय कराती है। इसमें ट्रेडल, क्रैंक, वेग-अनुपात, संचारण-यंत्र, गेयर, घर्षण-विरोधी बेयरिंग्स, ढांचों का त्रिकोणीकरण आदि सिद्धांतों का उल्लेख है। इसमें बल और ऊर्जा, हवा के प्रतिरोध, ब्रेकिंग और स्थिरता की चर्चा द्वारा साइकिल के वैज्ञानिक पक्षों पर भी प्रकाश डाला गया है।

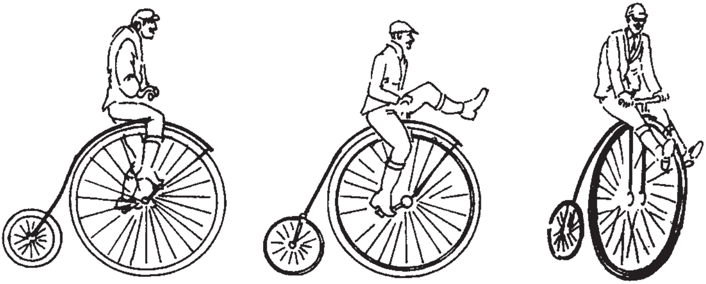

पुस्तक की अनोखी बात यह है कि इसके अंत में कुछ रोचक इंटरनेट सॉइट्स का उल्लेख है, जहां से उत्साही पाठक साइकिल के इतिहास और विज्ञान संबंधी अतिरिक्त जानकारी हासिल कर सकते हैं।

पुस्तक के लेखक **विजय गुप्ता,** इंडियन इंस्टिट्यूट आफ टेक्नालॉजी, कानपुर में ऐयरोस्पेस इंजिनियरिंग विभाग में प्रोफेसर हैं। उनकी शिक्षण और शैक्षणिक प्रौद्योगिकी में गहरी रुचि है। उन्होंने यूजीसी के कंट्री-वाइड क्लासरूम के लिए बहुत-सी शैक्षिक फिल्में बनाई हैं। उनकी फिल्म ***द फ्लाइंग मशीन*** को 1993 में छठे राष्ट्रीय विडियो फिल्म समारोह में सबसे उत्कृष्ट उत्पादन के लिए पुरस्कार मिला। उन्होंने इंजिनियरिंग के छात्रों के लिए बहुत-सी पाठ्य-पुस्तकें लिखी हैं और इंजिनियरिंग के सिद्धांतों के लोकप्रियीकरण के लिए बहुत से लेख भी लिखे हैं।

सर्वप्रथम सन् 2001 में यह पुस्तक अंग्रेजी में ***द बाइसिकिल स्टोरी*** नाम से ***विज्ञान प्रसार*** (नई दिल्ली) द्वारा प्रकाशित हुई। **साइकिल की कहानी** इसी पुस्तक का हिंदी अनुवाद है।

❒

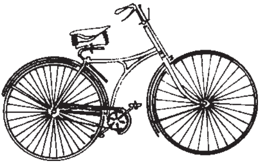

एक शानदार मशीन

गति ही जीवन का सार है। सभी प्राणी भोजन के लिए, शिकार करने या परभक्षियों से बचने के लिए इधर–उधर भटकते हैं। सांप सरकते हैं, इल्लियां रेंगती हैं, कंगारू कूदते हैं, घोड़े तेज दौड़ते हैं और मनुष्य चलते हैं। प्राणियों में मनुष्य ही सबसे अधिक आवागमन करते हैं। अधिकांश लोग अपने कार्यस्थल तक आने–जाने में कुछ किलोमीटर की यात्रा करते हैं, या फिर कुछ सौ किलोमीटर दूर स्थित शहर में रिश्तेदारों से मिलने जाते हैं, या फिर किसी व्यावसायिक मीटिंग में भाग लेने के लिए दुनिया का आधा चक्कर लगाते हैं। कुछ लोग सिर्फ मजे और रोमांच के लिए ही यात्राएं करते हैं।

मजबूरी में लोग लंबी यात्राएं तो करते ही हैं, परंतु वैसे इंसान का शरीर इस कार्य के लिए विशेष रूप से नहीं बना है। सबसे तेज इंसान की तुलना में चीता 10 गुना तेज दौड़ सकता है। घोड़े में कहीं

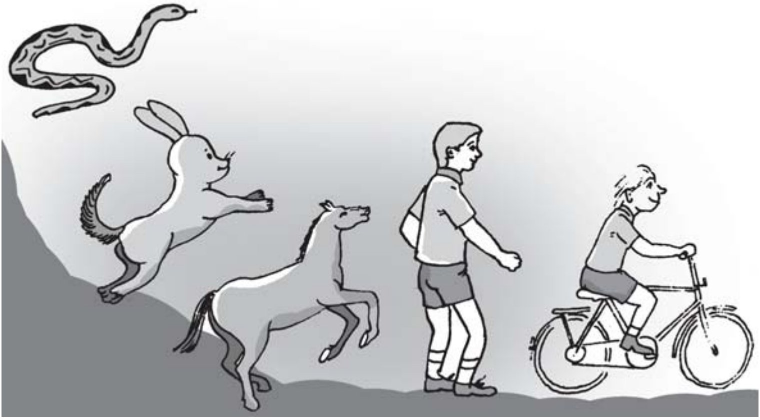

साइकिल सवार बाकी प्रतियोगियों से ऊर्जा की कार्यकुशलता में कहीं आगे है।

अधिक सहनशीलता होती है, परंतु वह अपने शरीर के भार की तुलना में केवल आधी ही ऊर्जा खर्च करता है। मनुष्य अपनी भौतिक क्षमताएं बढ़ाने के लिए मशीनें बनाता है। आवागमन बढ़ाने की दिशा में मनुष्य द्वारा पहिये का आविष्कार एक मील का पत्थर साबित हुआ। पहले बैलों, घोड़ों, ऊंटों आदि जानवरों ने और फिर भाप और गैसोलीन के इंजनों ने मनुष्य के आवागमन को बहुत तेज गति से आगे बढ़ाया है। मांसपेशियों के प्रयास से खुद पहियों को चलाने के विचार ने लोगों को हमेशा से आकर्षित किया है। यह एक रोचक तथ्य है कि रेल गाड़ियों के व्यावसायिक चलन के बाद और घोड़ा-विहीन गाड़ियों के आने से कुछ पहले ही साइकिल अपने सही और परिष्कृत रूप में सामने आयी। आज जब पेट्रोल इंजन की उड़ान 85 साल पुरानी हो चुकी है, तब भी सभी जगहों पर आविष्कारक सिर्फ मांसपेशियों की ऊर्जा से चलनेवाली और उड़ने वाली मशीन बनाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

आजतक बनी सारी मशीनों में साइकिल ही सबसे कार्यकुशल और दक्ष है। अगर हम सामान को कुछ दूर तक ढोने के लिए ऊर्जा की तुलना करें तो साइकिल में सर्वश्रेष्ठ जेट-विमान का केवल दसवां हिस्सा और सबसे अच्छी मोटरकार का बीसवां हिस्सा ही ऊर्जा खर्च होती है।

सरल-सी दिखने वाली साइकिल का अतीत बहुत गौरवशाली रहा है। शुरू में साइकिल की कल्पना रईस लोगों के मनोरंजन के लिए की गयी थी। परंतु जल्द ही यह आम लोग की यातायात-जरूरतों का एक सुलभ और कार्यकुशल साधन बन गयी। मोटरकार के आने के बाद साइकिल एक कसरत या खेल की मशीन बनकर रह गयी है। परंतु आज भी दुनिया के बहुत से हिस्सों में, खासकर चीन और दक्षिण-पूर्वी एशिया में, यह यातायात का एक प्रमुख साधन है। औद्योगिक देशों में साइकिल अब दुबारा लोकप्रिय हो रही है। यहां कम दूरी की यात्राओं के लिए अब लोग इसे अधिक पसंद करने लगे हैं। यह कोई प्रदूषण नहीं फैलाती है और न ही कोई आवाज करती है। इसे चलाने के लिए

न तो चौड़ी सड़कों की जरूरत पड़ती है और न ही इसे खड़ा करने के लिए बहुमूल्य पार्किंग स्थान की। एक अनुमान के अनुसार, शहर के मध्य स्थित केंद्रों में 8 किलोमीटर तक की दूरी तय करने में साइकिल को कार से कम समय लगता है। इसमें कार को गैरेज से निकालने, बाजार में उसे खड़ा करने का स्थान ढूंढने और कार-पार्क से अपने कार्यस्थल तक जाने का समय शामिल है। इसके अलावा, साइकिल चलाकर काम पर जाने से शरीर की अच्छी कसरत भी होती है।

इस पुस्तिका में साइकिल की मनमोहक कहानी और उसमें धीरे-धीरे आए तकनीकी विकास का वर्णन किया गया है।

पहले कदम

दो पहियों वाली गाड़ी, जिसे चालक खुद अपनी ताकत से चलाता था, का पहला उल्लेख 1791 की एक खिलौनानुमा मशीन में मिलता है। इसमें एक छोटी लकड़ी की बल्ली के दोनों ओर केवल एक-एक पहिया होता था। चालक बल्ली पर बैठकर दोनों पैरों से बारी-बारी जमीन को धक्का देता था, जैसा कि स्केटिंग में किया जाता है। इस मशीन को मोड़ने के लिए उसके अगले पहिये को उठाकर घुमाना पड़ता था। अगर दोनों

सबसे पहले 1791 में हॉबी-हार्स को पेरिस के एक पार्क में रईसों के एक खिलौने के रूप में प्रदर्शित किया गया।

पैर जमीन को न छू रहे हों तो यह मशीन सीधी खड़ी न रहकर चंद क्षणों बाद ही एक ओर गिर जाती थी।

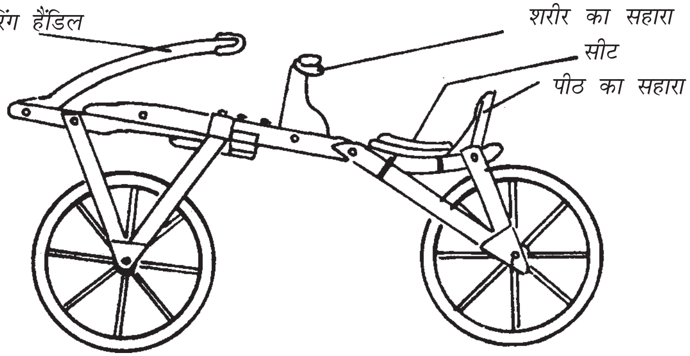

ड्रायसियान (1871) के अगले पहिये पर हैंडिल लगने के कारण साइकिल को कुछ स्थिरता मिली। "हॉबी-हार्स चालक अपनी गाड़ी पर सवारी करने के साथ-साथ मिट्टी में भी चलते।"

इस बेढंगी मशीन में कुछ सुधार 1817 में हुए, जब इसके अगले पहिये को एक हैंडिल से घुमाया जाना संभव हुआ। उस समय यह मशीन हॉबी-हार्स, ड्रायसियान (जर्मन आविष्कारक बैरन फॉन ड्रायस के नाम पर) और विलोसीफेयर आदि नामों से जानी जाती थी। यह मशीन उस समय के रईस और फैशनेबिल लोगों के बीच काफी लोकप्रिय हुई। मशीन में स्टेयरिंग वाला अगला पहिया महत्वपूर्ण था, क्योंकि उससे ड्रायसियान को संतुलित रखना कुछ आसान हुआ। ड्रायसियान का चालक लंबी यात्राओं में किसी भी दौड़ते आदमी या घोड़ागाड़ी को आसानी से हरा सकता था। परंतु लोग इसमें चालक की बेढंगी मुद्रा का मजाक उड़ाते और ऊबड़-खाबड़ सड़कों पर ठोस पहियों की मार से बहुत से चालकों को हर्निया हो जाता। इससे साइकिल के विकास की गति में कुछ ढील आयी।

ट्रेडिल और क्रैंक

सचमुच की पहली साइकिल, जिसे दोनों पैरों को जमीन से पूरी तरह ऊपर उठाकर चलाया जा सकता था, 1870 में बनी। एक स्काटिश लोहार – मैकमिलन किर्कपैट्रिक– ने पैरों की मांसपेशियों से पिछले पहिये को सीधे चलाने का इंतजाम किया। इसमें पैरों से बारी–बारी करके मशीन को जमीन से धक्का देने की जरूरत नहीं थी। इसके लिए फ्रेम के अगले हिस्से से दो छड़ें लटकाई गई थीं। इन छड़ों के निचले भाग को ट्रेडिल कहा जाता था। ट्रेडिल पर लगे पैडिलों को पैरों से बारी–बारी करके छोटे चापों में चलाया जाता था। ट्रेडिल की चाल को दो अन्य छड़ों की मदद से पिछले पहिये से जोड़ा गया था, जहां वे दो क्रैंकों को चलाते थे। क्रैंक द्वारा छड़ों की खींच और धक्के की गति पिछले पहिये को घुमाती थी।

ट्रेडिल से चलने वाला क्रैंक बहुत–सी मशीनों का एक सामान्य हिस्सा होता है। साधारण पैर से चलने वाली सिलाई मशीन में भी इसी

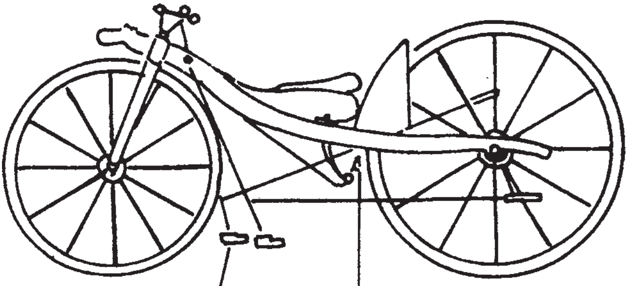

मैकमिलन की विलॉसिपीड (1839) वह पहली साइकिल थी जिसमें पैर मिट्टी से सनते नहीं थे। इस मॉडल की एक भी साइकिल नहीं बिकी, परंतु बहुत से लोगों ने इसकी नकल की।

तकनीक के इस्तेमाल से पैर के पटले की झूलने वाली गति को पहिये की गोल गति में बदला जाता है। इसी तरकीब द्वारा भाप और कार के इंजनों में पिस्टन की आगे–पीछे की गति को क्रैंकशाफ्ट की गोल गति

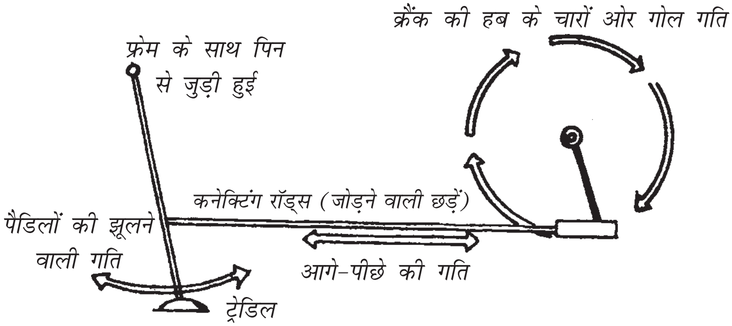

ट्रेडिल, क्नेक्टिंग रॉड्स को चलाते हैं, जिससे क्रैंक पूरा चक्कर लगाता है और उससे पहिया घूमता है। इसी प्रकार की गति का इस्तेमाल पैर से चलने वाली सिलाई मशीन और इंजन क्रैंक में होता है।

में परिवर्तित किया जाता है।

विलॉसिपीड वास्तव में सचमुच की साइकिल थी, परंतु वह व्यावसायिक स्तर पर सफल नहीं हो पायी और इसलिए बहुत कम लोगों को ही उसके क्रांतिकारी डिजाइन के बारे में पता है। अगले चालीस सालों तक साइकिल के डिजाइन में कुछ खास हलचल नहीं हुई, विशेषकर पैरों की गति को पहिये की गोल चाल में बदलने की समस्या को लेकर।

व्यावसायिक रूप से सफल पहली साइकिल 1863 में बाजार में आई। इसमें अगले पहिये के साथ दो पैडिल लगे थे और उसे आजकल बच्चों की तीन-पहियों वाली साइकिल की भांति ही

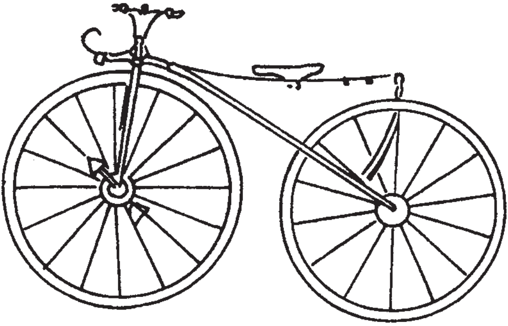

मिचौक्स की विलॉसिपीड (1863) व्यावसायिक रूप से पहली सफल मशीन थी। बहुत महंगी होने के बावजूद लोग इसके दीवाने हो गए और इसकी शोहरत अमरीका से यूरोप तक फैली। इसे साहसी और अमीर लोग ही चलाते। क्योंकि इसमें बहुत झटके लगते थे, इसलिए इसका नाम 'बोन-शेकर' पड़ा। बहुत से निंदकों के कारण इसको कई जगह सड़कों से हटाना पड़ा।

चलाया जाता था। उसमें लकड़ी के पहियों पर लोहे के टायर चढ़े थे। जब यह साइकिल पत्थर की सड़कों पर चलती थी तो चालक को बहुत धक्के लगते थे और शायद इसीलिए इसका नाम 'बोन-शेकर' यानि हड्डियां हिलाने वाली साइकिल पड़ा।

इसके बावजूद 'बोन-शेकर' अपने पहले वाली सभी साइकिलों से कहीं बेहतर थी। वह हल्की और तेज थी। वह 'हॉबी हार्स' के मुकाबले कहीं अधिक आरामदेह थी। इस आराम का कारण था – एक लीफ-स्प्रिंग, जो अगले पहिये से पिछले पहिये तक जाती थी। बैठने की सीट इसी लीफ-स्प्रिंग पर लगी थी।

वेग अनुपात और साधारण पूंछ

पैडिलों को अगले पहिये से जोड़ने का एक प्रभाव तो यह हुआ कि पैरों के एक चक्कर से अब अगला पहिया भी एक चक्कर ही घूमता था। इससे पहिये की परिधि की दूरी जितना ही साइकिल आगे बढ़ पाती थी। इसे ठीक रफ्तार नहीं समझा जाता था। तेज गति से आगे बढ़ने के लिए 'बोन शेकर' को कोई अधिक तेजी से पैडिल कर सकता था, परंतु इसमें एक दिक्कत थी। मनुष्य की कार्यक्षमता (पावर-आउटपुट) उसके द्वारा क्रैंक पर लगाए बल और पैडिल करने की गति (यानि वह एक मिनट में कितने चक्कर लगाता है– संक्षेप में आरपीएम) पर निर्भर करती है। पैडिल पर समान बल लगे तो पैडलिंग की गति बढ़ने के साथ-साथ कार्यक्षमता भी बढ़ती है। परंतु पैडिल पर लगा बल बदलता रहता है। बार-बार प्रयोग करने से पता

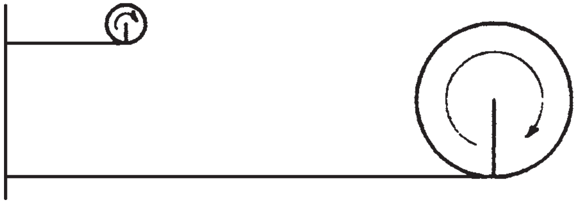

बड़ा पहिया एक चक्कर में अधिक दूरी तय करता है।

चला है कि गति बढ़ने के साथ यह बल कम होता है। जब पैडिलों में ताला लगा होता है तो उनपर अधिकतम बल लगता है; परंतु काम कुछ भी नहीं होता है, क्योंकि पहिये रुके होते हैं। पैडिलों को एक निश्चित गति से चलाने पर पैडलिंग द्वारा सबसे अधिक कार्य होता है। यह गति 45 से 60 चक्कर प्रति मिनट होती है। आजकल की नवीन साइकिलों की तेज गति से चल पाने के लिए 'बोन शेकर' को बहुत ज्यादा तेजी से पैडिल करना होता, जो किसी भी हालत में आरामदेह नहीं होता।

अगले पहिये को बड़ा बनाकर इस समस्या को सुलझाया जा सकता था। जिन साइकिलों में क्रैंक पहिये से सीधा जुड़ा होगा, वहां साइकिल पहिये की बड़ी परिधि के कारण पैडिल के एक चक्कर में ज्यादा दूर जाएगी। दूरी बढ़ाने (और बल घटाने) के सरल सिद्धांत को लीवर के उदाहरण द्वारा आसानी से समझा जा सकता है। इसके लिए जरा पुराने जमाने के रेलवे सिग्नल पर नजर डालें। दायीं ओर वाले छोटे हाथ (प्रयास) से लगे तार की छोटी चाल से ही बायें हाथ वाले सिग्नल (इसे लीवर की शब्दावली में 'भार' वाला हाथ कहते हैं) को अधिक चाल मिलती है। नोट करें कि इससे 'प्रयास' द्वारा उठाया 'भार' भी उसी अनुपात में कम होगा। 'भार' और 'प्रयास' के अनुपात को

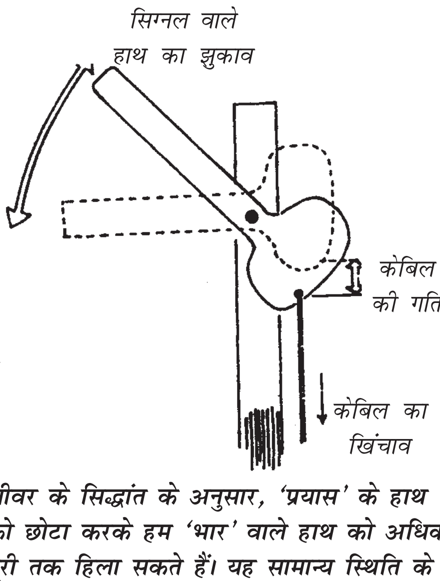

लीवर के सिद्धांत के अनुसार, 'प्रयास' के हाथ को छोटा करके हम 'भार' वाले हाथ को अधिक दूरी तक हिला सकते हैं। यह सामान्य स्थिति के बिल्कुल विपरीत है जहां 'प्रयास' का हाथ बड़ा होता है जिससे बड़े 'भार' को छोटी दूरी तक हिलाया जा सके।

यांत्रिक–लाभ कहते हैं। साइकिल में हम वेग–अनुपात को बढ़ाना चाहते हैं और इसके लिए हमें यांत्रिक–लाभ के कम होने की कीमत चुकानी पड़ती है।

अगले पहिये के व्यास को बड़ा करना वेग–अनुपात को बढ़ाने का एक तरीका है। इसके लिए दो अलग नापों के गेयर, या दो अलग नापों की घिरनियों के बीच एक बेल्ट, या फिर एक बड़ी चेन–व्हील और एक छोटे स्प्राकिट (दांतों वाले पहिये) के बीच चेन को उपयोग में लाया जा सकता है। मोटरकारों में जहां गेयरों का ही अधिकतर इस्तेमाल होता है, इस वेग–अनुपात को आमतौर पर गेयर–अनुपात कहा जाता है।

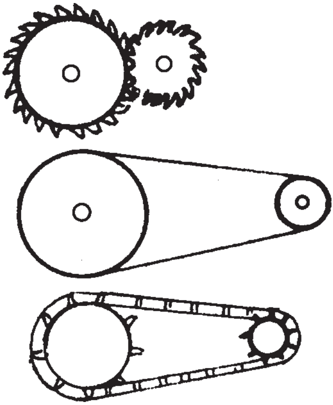

चलने वाले पहिये को तेजी से घुमाने के विभिन्न तरीके हैं- गेयर, बेल्ट और चेन। हरेक तरीके के अपने लाभ और नुकसान हैं।

इन सभी शक्ति संचारण (जिसमें पैडिल से पहिये तक, शक्ति संचारण में यांत्रिक–लाभ मिले) के तरीकों के अपने लाभ और नुकसान हैं। उदाहरण के लिए, बेल्ट–ड्राइव घर्षण पर आधारित है, जिससे बेल्ट घिरनी पर नहीं फिसले। बेल्ट के गंदा, तेलयुक्त और ढीला होने से यह घर्षण बहुत कम हो जाता है। गेयरों से बेहतर परिणाम मिलते हैं, परंतु गेयर महंगे भी होते हैं।

लगता है, हम अपनी कहानी में आगे छलांग लगा रहे हैं। जैसा हमने पहले देखा है कि 'बोन–शेकर' में अगले पहिये के व्यास को बढ़ाकर हम उसके गेयर–अनुपात को बड़ी आसानी से बढ़ा सकते थे। और इसी युक्ति को बड़े पैमाने पर अपनाया भी गया। इससे अगले पहिये का आकार बड़ा होता गया। वह 36 इंच से 48 इंच और फिर 54 इंच, और अंत में 64 इंच (163 सेमी) व्यास का हो गया। अगला पहिया अधिक–से–अधिक कितना बड़ा हो सकता है, इसे चालक की

टांगों की लंबाई ने सीमित किया। पूरी मशीन के भार को कम करने के लिए पिछले पहिये का व्यास सिकुड़ कर घटता गया और अंत में इन साइकिलों ने पेनी-फारदिंग (ब्रिटिश सिक्का फारदिंग, पेनी से चार गुना बड़ा होता है) का एक निश्चित आकार ले लिया। इन मशीनों को 'टॉल-और्डिनेरीज' और ऊंचे-पहिये भी कहा जाता था।

ऊंचे-पहियों पर सवारी करने के नुकसान

ऊंचे-पहियों वाली साइकिलें महिलाओं और कमजोर दिल वाले साधारण लोगों के लिए नहीं बनी थीं। इन साइकिलों की जमीन से डेढ़ मीटर ऊंची सीट पर चढ़ना भी कोई आसान काम न था। मशीन को धक्का देने के बाद आप उसके छोटे पहिये के ऊपर लगी सीढ़ी पर पैर रखते और फिर कूदकर सीट पर बैठने की कोशिश करते। इस प्रकार की साइकिल को पैडिल करना कठिन होता, क्योंकि इसमें सीट और पैडल की निचली स्थिति के बीच की दूरी अक्सर टांग की लंबाई से ज्यादा होती। इन्हें लंबे व वयस्क आदमी भी वैसे ही चलाते जैसे वर्तमान में बड़ी साइकिलों को बच्चे चलाते हैं। इन्हें चलाते समय

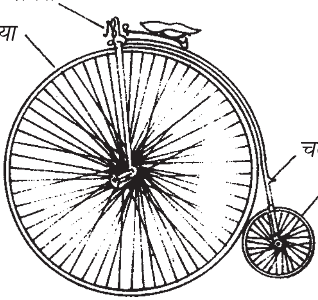

ऊंचे पहिये वाली साइकिलों को आम लोगों ने पहली बार चलाया। पांव रखकर ऊपर चढ़ने वाली इस प्रकार की कई हजार साइकिलें बनीं। 1870 से 1890 तक ये साइकिलें सड़कों पर छायी रहीं। इस साइकिल ने पहली बार लोगों को मुक्त होकर सड़क पर चलने की स्वतंत्रता प्रदान की। परंतु इन्हें भी केवल खिलाड़ी, साहसी और मर्द ही चलाते थे। मनुष्य की टांगों की लंबाई ने अगले पहिये के व्यास की बढ़त सीमा तय की।

चालक सीट पर आराम से बैठ नहीं सकता है। उसे नीचे जाने वाले पैडिल की ओर काफी झुकना पड़ता है। साइकिल से नीचे उतरने में भी काफी दिक्कत होती थी।

परंतु ऊपर बैठा और सवारी करता हुआ चालक दोनों पैरों को पैडिलों से हटाकर ऊंचे सिंहासन पर बैठकर नीचे की दुनिया का आनंद ले सकता था। उस समय इस साइकिल की अधिकतम गति कोई बाईस मील प्रति घंटा थी। यह सड़क पर अन्य किसी भी वाहन की गति से अधिक थी। इसलिए डरकर लोग साइकिल के सामने से

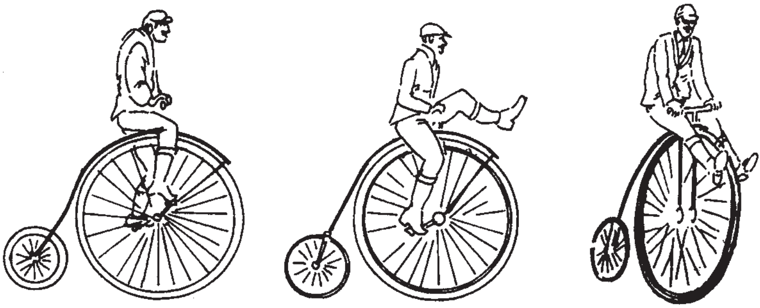

इस ऊंची साइकिल के ऊपर बैठे सवार को बड़ी शाही-शान शौकत महसूस होती थी। परंतु इन साइकिलों को चलाने के लिए बहुत कुशलता की आवश्यकता होती थी : 1. चलाने के शुरू में 2. बहुत बड़े पहिये को पैडिल करने में 3. ढलान पर नीचे उतरने में।

हट जाते थे। परंतु तेज रफ्तार और श्रेष्ठता की भावना के लिए चालक को एक ऊंची कीमत भी चुकानी पड़ती। जब चालक अगले बड़े पहिये पर बैठा होता तो मशीन का गुरुत्व-केंद्र बहुत ऊंचाई पर और आगे की ओर होता। इससे मशीन की स्थिरता कम हो जाती। अगर सामने कोई छोटी भी बाधा या पत्थर आता तो ब्रेक लगाते ही चालक सीधे मुंह के बल जमीन पर गिरता और मिट्टी चाटता। अनुभवी चालकों के साथ भी इस प्रकार की दुर्घटनाएं होतीं। ये दुर्घटनाएं बार-बार होती थीं और इसलिए इन चालकों को 'क्रापर' और 'इंपीरियल क्राउनर' जैसे उपनामों की उपाधियां दी गईं।

इन ऊंची साइकिलों की स्थिरता और संतुलन को बढ़ाने के सभी प्रयास विफल रहे। इसके लिए चालक को पीछे और नीचे की ओर सरकाना पड़ता। इसे इन ऊंचे पहिये वाली साइकिलों के साथ करना संभव न था। इसके हल की खोज में साइकिल की पूरी ज्यामिति को ही उल्टा-पुल्टा कर दिया गया। अब चालक को चलाने वाले पिछले पहिये के ऊपर बैठाया गया। परंतु पिछले पहिये को सीधे चलाने के लिए उसे पहिये के पीछे किसी स्थान पर बैठना जरूरी होता। संतुलन की दृष्टि से ऐसा करना असंभव था। 1882 की मशहूर अमरीकी स्टार साइकिल को सीधे चलाने की बजाय कुछ लीवरों, ड्रमों और पट्टों (ट्रेडिल की भांति) से चलाने की कोशिश की गई। स्टार साइकिल को एक सुरक्षित साइकिल की हैसियत से कुछ सफलता अवश्य मिली, परंतु अगले कुछ वर्षों के लिए तिपहिया साइकिल ही आविष्कारकों और उत्पादकों के आकर्षण का केंद्र रही। ब्रिटेन के राजसी परिवार की हिमायत के कारण भी तिपहिया साइकिलें वहां की फैशनेबिल महिलाओं के बीच में लोकप्रिय हुईं। ये महिलाएं अपने लिए मर्दों के बराबर दर्जे की मांग कर रही थीं।

सड़क पर कुत्तों, सुअरों, मुर्गियों और बच्चों, ईंटों और गड्ढों के कारण चालक बुरी तरह मुंह के बल गिरता था। पहिये की तीलियों में कोई ईंट, मजबूत रस्सी या छड़ घुसने से भी यही होता था। इन ऊंची साइकिलों के चालकों पर लोग बुरी तरह अपना गुस्सा निकालते थे। कभी-कभी बड़े पहिये की अनगिनत तीलियों में चालक का पैर या कपड़ा भी फंस जाता और तबाही लाता।

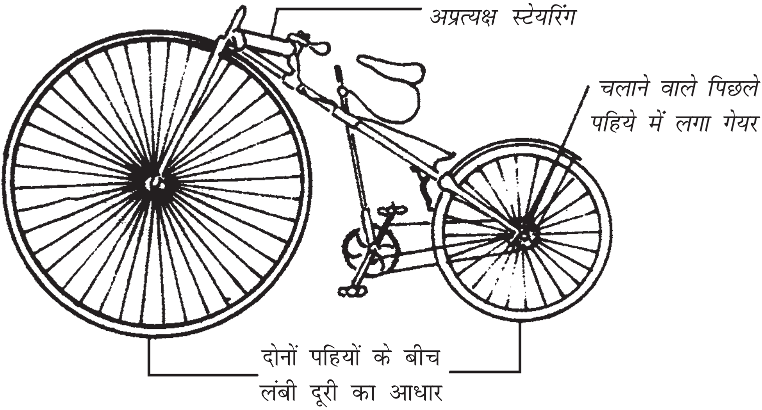

लौसन की चेन चालित 'बाइसिक्लिट' (1879) में पहली मार्डन साइकिल बनी जिसमें पिछला पहिया चेन से चलता था। क्योंकि चालक की सीट बहुत पीछे थी, इसलिए हैंडिल दूर संचालित था।

सुरक्षित मशीन

आजकल की नवीन साइकिल के समान दिखने वाली पहली मशीन 1879 में सड़क पर उतरी। इस कम ऊंचाई वाली मशीन पर चालक दोनों पहियों के बीच में बैठकर एक क्रैंक को चलाता था। इससे पिछला पहिया चेन के जरिए चलता था। इसमें बड़े चेन-व्हील और छोटे स्प्राकिट के उपयोग द्वारा अधिक गेयर-अनुपात भी मिलता था। इसमें चलाने वाले पहिये का बहुत बड़ा होना जरूरी नहीं था। इनमें पहिये की नाप वेग-अनुपात को निर्धारित नहीं करती थी। यहां

शुरुआती 'रोवर सेफ्टी साइकिल' (1885) में भी अप्रत्यक्ष स्टेयरिंग था। इसमें पहली बार एक छोटा बर्फी के आकार के फ्रेम का उपयोग किया गया जो आजतक एक मानक फ्रेम के रूप में बरकरार है।

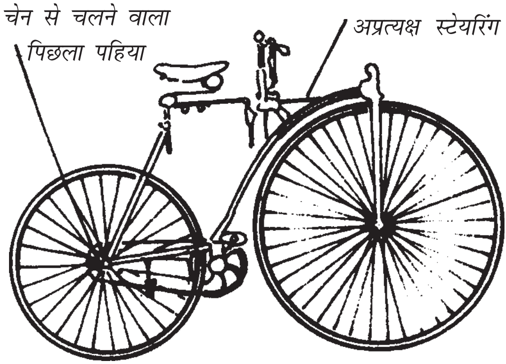

वेग–अनुपात को बदलने के लिए चेन–व्हीलों को छोटा–बड़ा किया जा सकता था।

इसमें चालक अपना संतुलन खोते समय आसानी से अपने पैरों को जमीन पर टिका सकता था। इस साइकिल का गुरुत्व–केंद्र नीचे और पीछे की ओर था। इसकी वजह से चालक किसी मुंडेर से टकराने के बाद भी मुंह के बल नीचे की ओर नहीं गिरता था। इन कारणों से इस साइकिल को 'सुरक्षित' करार दिया गया।

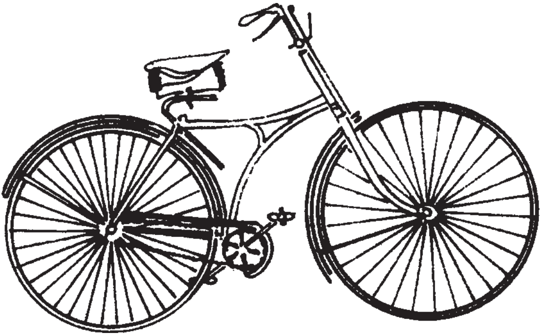

बाद की रोवर सेफ्टी साइकिल का मॉडल जिसमें साइकिल पूरी तरह से विकसित हुई।

सुरक्षित होने के बावजूद इस साइकिल को तमाम विरोधों का सामना करना पड़ा। ठोस टायरों के कारण इसमें ऊंची साइकिलों से भी अधिक कंपन होते थे और कच्ची जमीन के इतने नजदीक पैडिल करने से पैर धूल से सन जाते थे। परंतु आने वाले सुधारों और उसके गुणधर्मों के अनुभवों से केवल 10 साल के अंदर ही इस साइकिल ने लगभग सबका दिल मोह लिया, क्योंकि अब अगला पहिया सिर्फ स्टेयरिंग के लिए मुक्त था और उसपर पैडिलों का कोई दबाव नहीं था। इसलिए मशीन को संतुलित रखने में बिल्कुल जोर नहीं लगाना पड़ता था। अब कोई भी चालक हैंडिल से अपने दोनों हाथों को हटाकर भी आराम से साइकिल चला सकता था। इन मशीनों के हैंडिल या कैरियर पर अधिक मात्रा में सामान रखकर ढोया जा सकता था। इस साइकिल को चलाना सीखना भी एकदम बच्चों का खेल था।

इसके डिजाइन में कुछ अन्य सृजनशील सुधार हुए। 1885 में

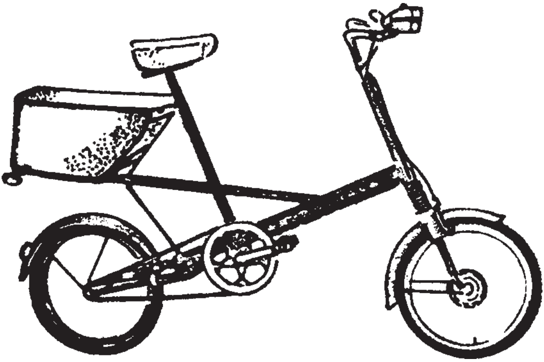

पिछले सौ वर्षों में मोल्टन साइकिल (1967) का डिजाइन ही क्रांतिकारी परिवर्तन लाया है। इसमें 16 इंच व्यास के पहिये होते हैं और क्रॉस-फ्रेम होता है। इसे चलाना फैशनेबिल, आसान और आरामदेह होता है।

पहली बार इसमें बर्फी के आकार का ट्यूब फ्रेम लगा, जो इसका एक विशेष लक्षण है और जिसमें आजतक कोई खास बदलाव नहीं आया है। इससे साइकिल के भार में बहुत कमी आई। 1888 में पहली बार साइकिलों में हवा से भरे टायर लगाए गए जिन्होंने झटकों को झेलने और ऊबड़-खाबड़ सड़कों पर आराम से सवारी करने का एक अभूतपूर्व अनुभव प्रदान किया। 1890 तक सुरक्षित साइकिल काफी आरामदेह और उपयोगी बन चुकी थी। उसे अधिकांश लोगों ने आवागमन के एक लोकप्रिय साधन के रूप में स्वीकारा। इसे उन लोगों ने भी अपनाया जो पहले इसे अपनी प्रतिष्ठा के नीचे समझते थे और उन लोगों ने भी जो पहले साइकिल को चला पाना एक बहुत कठिन कार्य समझते थे। साइकिलों का अब तेजी से इस्तेमाल होने लगा – फेरीवालों, मजदूरों के साथ-साथ महिलाएं इनका शाम को सैर-सपाटे के लिए उपयोग करने लगीं।

पिछले 100 वर्षों में साइकिल में बहुत कम बदलाव आए हैं। 1885 की रोवर साइकिलें आजकल की सफारी साइकिलों जैसी ही लगती हैं। हां, कुछ सुधार तो निश्चित तौर पर हुए हैं। आजकल हम साइकिल निर्माण में कहीं अधिक मजबूत और हल्के पदार्थों का उपयोग करने लगे हैं। बाल-बेयरिंगों में भी सुधार हुआ है। नए कैलिपर-ब्रेक्स भी अधिक प्रभावशाली हैं।

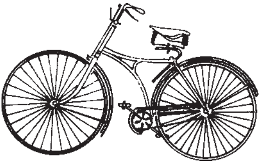

साइकिल के हिस्से

पहिये

अक्सर कहा जाता है कि किसी भी सृजनशील इंजिनियर को सबसे उपयोगी विचार अपने आसपास के प्राकृतिक जगत से मिल सकते हैं। जो भी समस्याएं मनुष्य के सामने आएंगी, प्रकृति का क्रमिक विकास उनका समुचित हल अवश्य खोज निकालेगा। यातायात के क्षेत्र में पहिया सबसे महान आविष्कार था। चिकनी सतह पर बेलनाकार पहिये के लुढ़कने की जगह अगर उसी भार को जमीन पर खींचा जाए तो उसे 100 गुने अधिक अवरोध का सामना करना पड़ेगा। मनुष्यों ने निश्चित ही पत्थरों को पहाड़ियों पर से लुढ़कते हुए देखा होगा। गतिशील घर्षण का यह सबक शायद उन्हें बेलनाकार लकड़ी के लट्ठों को लुढ़कते हुए या अन्य चीजों को देखकर मिला हो।

ट्रेन के स्टील पहिये को स्टील की पटरी पर चलने में न्यूनतम अवरोध का सामना करना पड़ता है, जो पहिये के भार का केवल हजारवां हिस्सा होता है। परंतु जब यह पहिया किसी

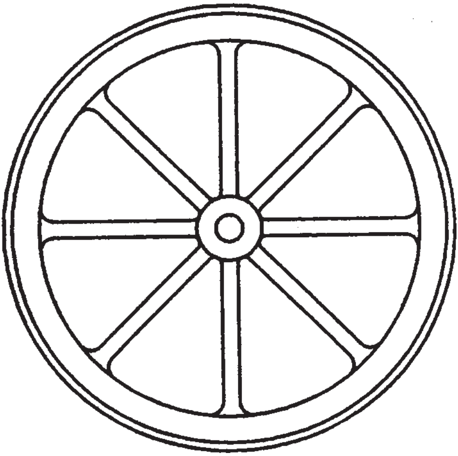

एक गाड़ी का पहिया जिसकी मजबूत तीलियां संपीडन (कम्प्रेशन) में हैं।

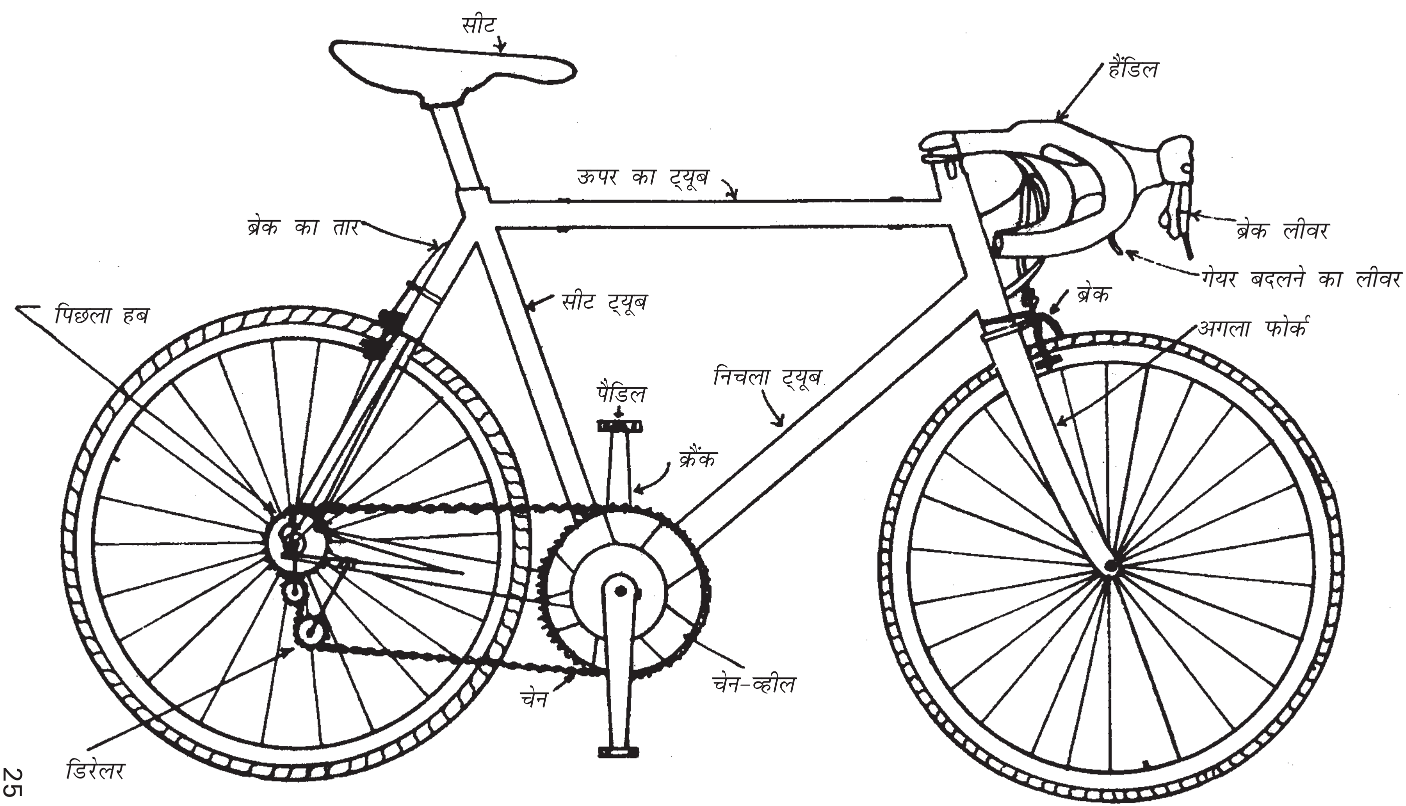

आज की नवीन साइकिल में बारीकी से बने बहुत सारे पुर्जों को इकट्ठा करके एक साथ जमाया गया है।

मुलायम सतह पर रुकता है तो वह सतह विकृत हो जाती है और उसमें एक छोटा–सा गड्ढा हो जाता है। पहिये को अब आगे लुढ़कने के लिए अधिक प्रयास करना होगा, क्योंकि उसे उस छोटे गड्ढे में से निकलना होगा। इसी प्रकार अगर कोई मुलायम पहिया कठोर सतह पर लुढ़क रहा हो तो वह संपर्क बिंदु पर पड़े भार के कारण विकृत हो

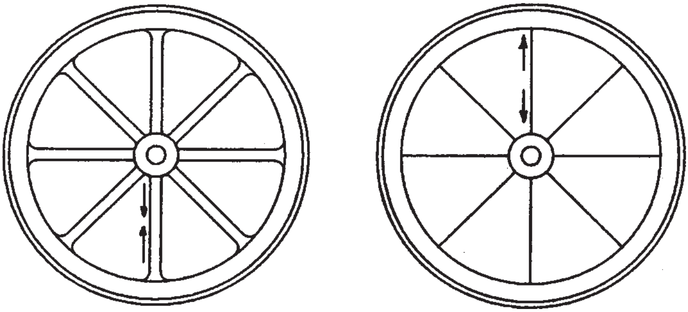

गाड़ी की मजबूत तीलियां हब पर लगे बल को संपीडन (कम्प्रेशन) में सहती हैं। साइकिल में पतले तार की तीलियां इसी बल को तनाव (टेंशन) में सहती हैं।

जाता है। यह 'विकृत' पहिया अब पूर्णत: गोलाकार नहीं रहता है, इसलिए वह आसानी से लुढ़क भी नहीं पाता है। दोनों ही स्थितियों में 'विकृतियों' के कारण गति के लिए अधिक प्रयास की आवश्यकता पड़ती है।

हॉबी–हार्स और बोन–शेकर साइकिलों के पहिये बहुत भारी–भरकम और बैलगाड़ी के पहियों जैसे थे। उनमें लकड़ी की मोटी तीलिया (स्पोक्स) भार सहती थीं। पहियों और तीलियों में लोच की कमी और कठोरता के कारण चालक को सड़क पर पड़े छोटे–से पत्थर से भी भारी झटके का

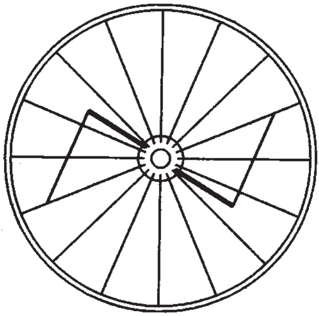

शुरू में पहियों में तनाव वाली तीलियां रिम से सीधे हब की ओर जाती थीं। वे तीलियां खड़ा भार तो सह पाती थीं, परंतु हब पर लगे बल–आघूर्ण को रिम तक नहीं पहुंचा पाती थीं। इसलिए इन पहियों में अलग से खुद की तनाव–तीलियों वाली कुछ सख्त छड़ें लगाई जाती थीं।

अहसास होता था।

पहियों के डिजाइन में पहली प्रगति पेनी–फारदिंग साइकिलों के आने के साथ हुई। इनके पहियों का डिजाइन लटकाने (यानि सस्पेंशन) के सिद्धांत पर आधारित था। इसमें भार (जिसका प्रतीक केंद्रीय हब था) को पतले तारों के जरिए रिम के ऊपरी हिस्सों से लटकाया गया था। यहां खंभे जैसी तीलियां रिम के निचले हिस्से से नहीं लगी थीं। हमें अच्छी तरह इतना पता है कि एक पतली छड़ से अगर कोई भार लटकाया जाए तो वह बहुत अधिक भार उठा सकती है (क्योंकि यहां छड़ खिंचाव यानि टेंशन में होगी), परंतु अगर उतना ही भार उस छड़ के ऊपर रखा जाएगा तो वह मुड़ सकती है (क्योंकि यहां भार छड़ को दबाएगा)। जब किसी पतले खंभे को ऊपर दबाया जाता है तो वह कम भार से ही लचक जाता है। निर्माण के इसी सिद्धांत पर आधारित हल्के तारों या रस्सियों से लटके हुए सुंदर पुल (सस्पेंशन ब्रिज) बनाए जाते हैं। इसी सिद्धांत के उपयोग से नए पहियों में तारों की बनी तीलियों द्वारा पहियों के भार में बहुत कमी आयी।

शुरुआत के पहियों में त्रिज्यीय तीलियां लगी होती थीं। इन्हें कसकर शुरुआती तनाव दिया जा सकता था। इसमें सावधानी से सभी तीलियों के तनाव को बारी–बारी से ठीक करके पहिये के रिम को हब के केंद्र में लाया जा सकता था, जिससे पहिया सही प्रकार घूमे और बिल्कुल डगमगाए नहीं। परंतु त्रिज्यीय हबों से पैडिलों द्वारा हब पर लग रहे भारी मात्रा में बल–आघूर्ण (टार्क) को संचारित नहीं किया जा सकता था। थोड़े भी बल–आघूर्ण से पतले तार की बनी तीलियां मुड़ जाती थीं। इसके लिए दो सख्त छड़ें, जिनके

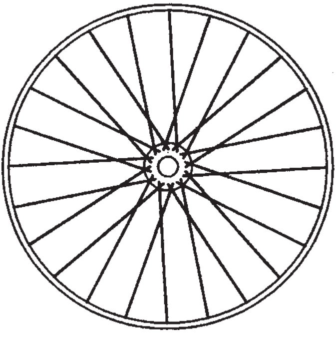

सबसे हल्के पहिये के लिए तीलियों का हब के स्पर्शरेखीय होना ही सबसे सरल होगा। इससे गति की छहों दिशाओं में रोकथाम होगी।

साथ इनकी अपनी तनाव तीलियां होती थीं (इसके लिए पेनी-फारदिंग का पहिया देखें), चलाने वाले पहिये से जोड़ी जाती थीं जिससे पहिया भारी हो जाए।

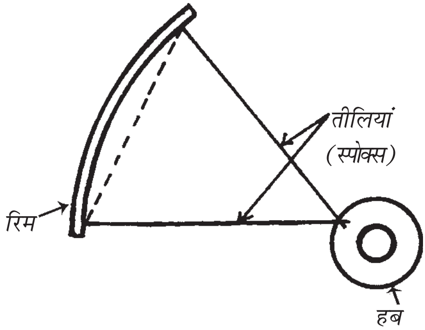

दो तीलियों और हब से मिलकर एक त्रिकोण बनेगा जो भार सहने का सर्वश्रेष्ठ ज्यामितीय आकार है।

परंतु कुछ ही समय बाद इन तनाव तीलियों से मुक्ति मिली। इसके लिए तीलियों को हब के चारों ओर सजाने का एक बेहद सृजनशील तरीका अपनाया गया। अब तीलियां हब के केंद्र में, त्रिज्यायों जैसे आने की बजाय हब से स्पर्शरेखीय रूप में जुड़ी होतीं। ऐसे पहिये के हब पर जब चेन वाले स्प्राकिट के माध्यम से बल-आघूर्ण लगाया जाता, तब तार की तीलियों में तनाव आता और वे रिम को उसी दिशा में चलातीं। तीलियों और हब द्वारा बने अनेक त्रिभुज यह सुनिश्चित करते कि सभी प्रकार के बलों का सिर्फ तीलियों के तनाव से प्रतिरोध हो। त्रिकोणीकरण के इसी सिद्धांत को बाद में सुरक्षित साइकिल के बर्फीनुमा फ्रेम बनाने के लिए उपयोग किया गया।

अत्वरण (डिसेलेरेशन) की अवस्था में पैदा हुए बल-आघूर्णों का भी प्रतिरोध इसी प्रकार किया गया, क्योंकि हरेक दूसरी तीली स्पर्शरेखीय दिशा में पीछे की ओर जाती थी। तीलियों में तनाव के कारण ब्रेकिंग द्वारा उत्पन्न बल-आघूर्णों का भी प्रतिरोध हो सका। आजकल तीलियों वाली सभी नवीन प्रकार की साइकिलों में लगभग इसी डिजाइन का उपयोग होता है।

हवा से भरे (न्यूमैटिक) टायर

आजकल की साइकिलों में इस्तेमाल किए जाने वाले हवा से भरे टायरों का पहली बार 1888 में प्रवेश हुआ। इनमें ठोस रबर के टायरों

के मुकाबले बहुत कम कंपन पैदा होते थे। इसका सिद्धांत सरल था। अब साइकिल हवा की एक थैली पर चल सकती थी, जिससे यात्रा आरामदेह और सुखद होती थी।

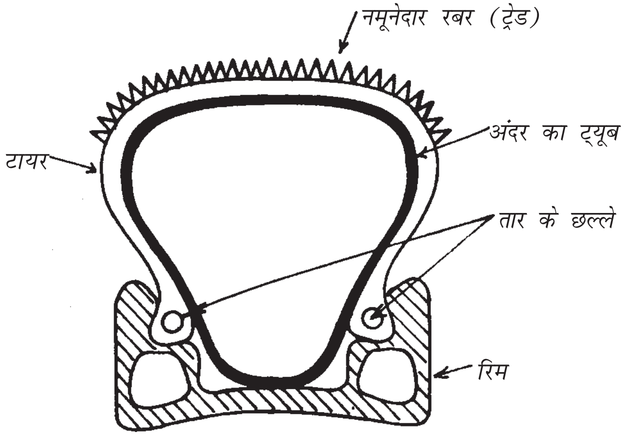

सामान्य टायर और रिम का कटान। रबर के टायर के किनारों पर खिंचा तार लगा होता है। इससे टायर अपनी जगह पर टिका रहता है।

यहां हवा एक पतले अंदर के ट्यूब में दबाव देकर भरी जाती है। हवा से भरे इस ट्यूब की सुरक्षा के लिए बाहर एक मोटा टायर होता है। टायर को मजबूती प्रदान करने के लिए उसकी रबर में मजबूत डोरी की कई तहें बिछी होती हैं। उसमें सिरों पर दो स्टील के तार के बने छल्ले भी होते हैं जो पहिये के रिम के खांचों में फिट बैठते हैं। जैसे-जैसे अंदर वाला ट्यूब हवा के दाब से फूलता है वैसे-वैसे टायर

जब कोई मुलायम टायर मुलायम सड़क पर लुढ़कता है तो टायर और सड़क दोनों ही विकृत होते हैं। विकृत सड़क एक प्रतिरोध उत्पन्न करती है, गति का विरोध करती है। इसी प्रकार टायर की विकृति भी उसे आसानी से लुढ़कने नहीं देती है।

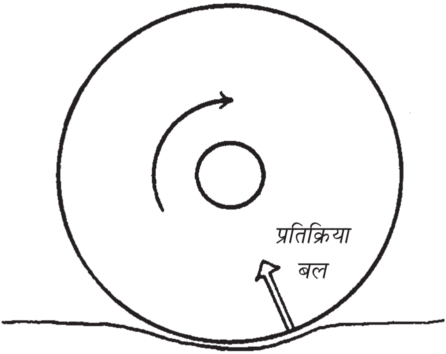

पर लगे तार के ये छल्ले फैलते हैं और रिम के खांचों में बैठकर टायर को उसके सही स्थान पर रखते हैं।

भार के कारण हवा से भरा टायर लचकदार होता है और इसी से घूमने का प्रतिरोध पैदा होता है। जैसे–जैसे भार से लदा टायर सड़क पर लुढ़कता है वैसे–वैसे टायर के विभिन्न भाग लगातार लचकते हैं और ऊर्जा का क्षय करते हैं। घूमने के प्रतिरोध को कम करने के लिए आप टायर में हवा के दाब को बढ़ा सकते हैं। हवा के अधिक दाब के कारण टायर भार की वजह से कम दबेगा और इससे उसका लचीलापन कम होगा। आजकल टायरों में सामान्य दाब ढाई से चार वायुमंडलीय दाब होता है (यानि 250–400 केपीए या 35–60 पीएसआई होता है)। हरेक साइकिल चालक को यह पता होता है कि टायर में अधिक हवा भरने से साइकिल ज्यादा तेजी से भागती है। परंतु उन्हें यह भी पता होता है कि अधिक हवा से भरे टायर धक्कों से कम बचाव करते हैं और इससे यात्रा कठिन झटकों से भर जाती है। सड़क पर पड़े सभी पत्थरों और गड्ढों के झटके सीधे साइकिल की सीट पर संचारित होते हैं।

जो लोग साइकिल दौड़ों में भाग लेते हैं उनके लिए आराम की बजाय रफ्तार अधिक महत्वपूर्ण होती है। वे लोग टायर में सामान्य से कहीं अधिक दाब की हवा भरते हैं। टायरों का दबना और उनके घूमने

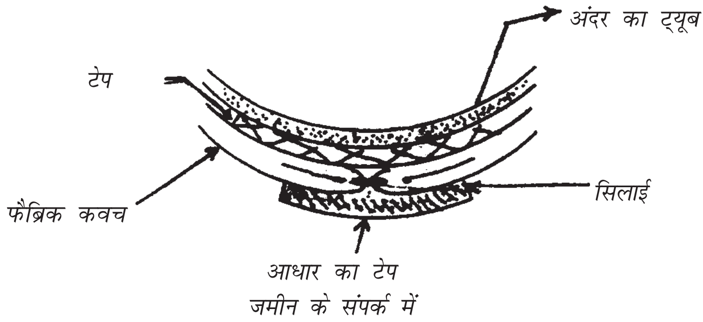

ट्यूबलर्स की बनावट। मजबूत कपड़े का खोल टायर का मुख्य आधार होता है। उसके अंदर ट्यूब सिला होता है। रबर का ट्रेड टायर के खोल पर बाहर से चिपका होता है।

का प्रतिरोध इस बात पर भी निर्भर करता है कि टायर कितना भार झेल रहे हैं। इसमें चालक का भार, साइकिल और टायर के खुद का भार भी शामिल होता है। सभी प्रकार के भार को कम करने के साथ-साथ (जिनमें उनका खुद का भार शामिल होता है) साइकिल दौड़ों के प्रतियोगी विशेष रूप से डिजाइन किए टायर्स - ट्यूबलर्स का उपयोग करते हैं। ये रेशम अथवा पोलिस्टर कपड़े के बने होते हैं (इनमें रबर मिली होती है) और हल्के वजन के अंदर वाले ट्यूब के ऊपर सिले गए होते हैं। फिर इस ट्यूब और टायर की जोड़ी को पहिये के रिम पर विशेष गोंद से चिपका दिया जाता है। इस प्रकार के ट्यूबलर्स बहुत हल्के होते हैं और वे अधिक हवा के दाब के कारण बहुत तेजी से लुढ़कते हैं। परंतु सुरक्षा की तहों के घटने के कारण उनमें काफी जल्दी पंचर भी हो सकता है।

बेयरिंग्स

फ्रेम के उन छेदों को, जिनमें धुरियां (शाफ्ट) घूमती हैं, बेयरिंग्स कहते हैं। साइकिलों के शुरुआती दौर में बेयरिंग्स में घर्षण कम करने के लिए उनको लगातार साफ करना पड़ता था और उनमें तेल डालना पड़ता था। जिस बेयरिंग में सही तरह से तेल न पड़ा हो उसमें (क) घर्षण बढ़ने के कारण अधिक बल लगाना पड़ता था, और (ख) बेयरिंग के अंदर धुरी के छेद की दीवार से रगड़ने के कारण खूब ऊष्मा पैदा होती थी। इस उच्च तापमान के कारण अक्सर बेयरिंग की दीवार पिघल जाती थी और उससे पहिये में जाम लग जाता यानि वह रुक जाता था। बेयरिंग्स को बार-बार साफ करने की हिदायत दी

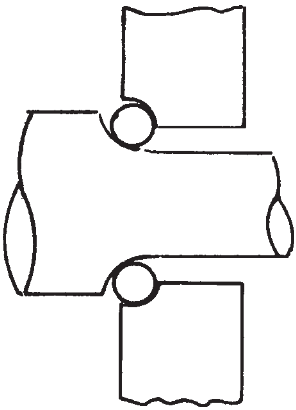

आमतौर पर प्रयोग किए जाने वाले बॉल-बेयरिंग का चित्र। इसकी धुरी पर एक कठोर 'कोन' या शंकु होता है और फ्रेम में 'कप' होता है। स्टील के छर्रे (गेंदें) कप और कोन के बीच घूमते हैं।

जाती थी, क्योंकि उनमें तेल से अधिक धूल और गंदगी आकर्षित होती थी और उससे बेयरिंग की सतहें खराब हो जाती थीं।

बाल-बेयरिंग और रोलर-बेयरिंग का उपयोग तो पहिये के विचार का ही एक विस्तार है। दो सतहों के बीच में घूमते एक कठोर रोलर से एक ओर फिसलन पर रोक लगती है और दूसरी ओर घर्षण का प्रतिरोध बहुत कम हो जाता है। साइकिल में प्रयोग किए जाने वाले बेयरिंग्स में सामान्यतः एक बाहरी कप और अंदरूनी कप के बीच कठोर स्टील की गेंदें घूमती हैं। गेंदें, कोन और कप सभी कठोर स्टील के बने होते हैं जिससे वे जल्दी घिसें नहीं और न ही जल्दी विकृत हों। इनसे घर्षण इतना अधिक कम हो जाता है कि इन बेयरिंग्स को घर्षण-विरोधी (एंटी-फ्रिक्शन) बेयरिंग्स भी कहा जाता है। बिना तेल डाले भी ये काफी दिनों तक सही-सलामत टिकते हैं। और अगर इन्हें कभी बदलने की जरूरत पड़े तो वह काम भी आसानी से और सस्ते में निबट जाता है।

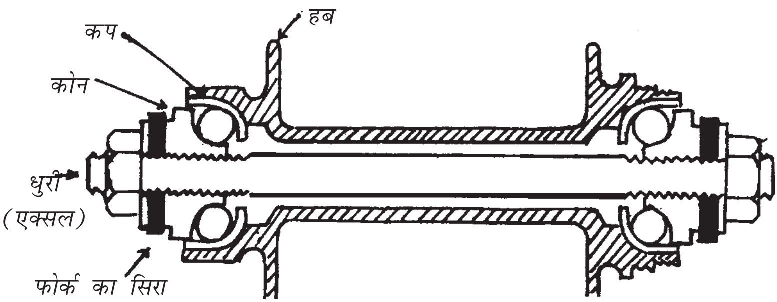

सामने पहिये के हब बेयरिंग के कटान का चित्र

चेन

चेन का डिजाइन भी विकास की एक क्रमिक प्रक्रिया से गुजरा। शुरू में चेन पिन के प्रकार की होती थीं जिनमें पिनें स्प्राकिट के दांतों में सीधे फंसकर लुढ़कती थीं। इनसे स्प्राकिट के दांत बहुत जल्दी घिस जाते थे। बाद के डिजाइनों में रोलर और बुश लगाए गए हैं जिनसे न

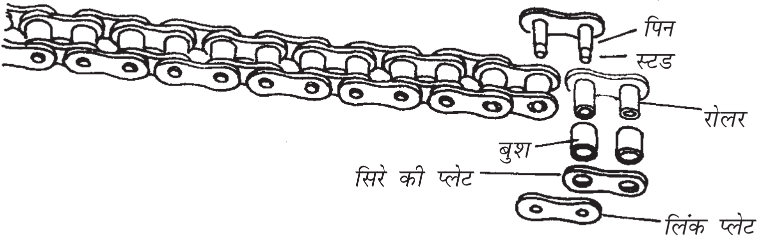

बुश-रोलर चेन (1880) बहुत कार्यकुशल, हल्की और लंबी उम्र तक चलती है। अच्छे पदार्थों और बेहतर निर्माण विधियों के अलावा इन चेनों में पिछले सौ वर्षों में कुछ बदलाव नहीं हुआ है।

तो स्प्राकिट के दांत और न ही सिरे की प्लेटें सीधे पिनों से संपर्क में आतीं। इससे इन पुर्जों का जीवनकाल बहुत बढ़ गया। आज की नवीन बुश-रोलर चेन - जिसका डिजाइन मूलत: 1880 में हुआ था- इतनी टिकाऊ और उत्तम निकली कि वह आज भी मोटरकारों के इंजनों में कैम-शाफ्ट को चलाने के लिए उपयोग की जाती है।

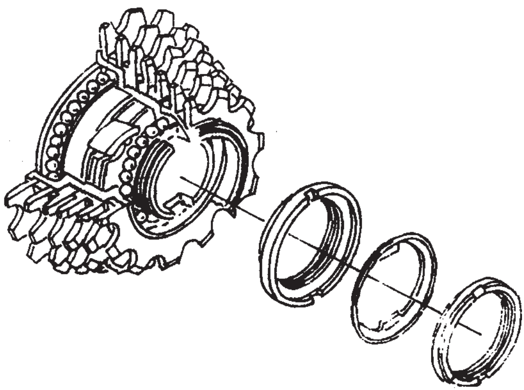

सात-रफ्तार वाले हब का विस्तृत चित्र। चेन इन तमाम स्प्राकिटों में से किसी एक पर चलती है और यह स्प्राकिट फ्रीव्हील के साथ जुड़ा होता है। स्प्रिंग से जुड़े गुटके (पौल) फ्रीव्हील से तब जुड़ते हैं जब वह एक दिशा में घूमता है और हब और पहिये को घुमाता है। जब फ्रीव्हील उल्टी दिशा में घूमता है तो यह पौल दबे रहते हैं और फ्रीव्हील और हब को आपस में फिसलने देते हैं।

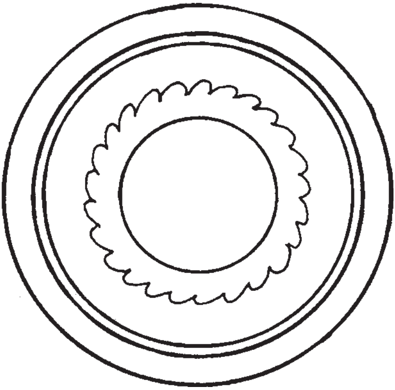

फ्रीव्हील के प्रमुख भाग। एक विशेष दिशा में घूमने पर चित्र में दिखाए तिरछे दांत गुटकों या पौल में फंस जाते हैं।

फ्रीव्हील

फ्रीव्हील एक ऐसा पुर्जा है जो पिछले चलने वाले पहिये के स्प्राकिट को उसके हब के साथ बड़ी चतुराई से जोड़ता है। जब स्प्राकिट आगे की दिशा में घूमता है तो फ्रीव्हील स्प्राकिट को हब से जोड़ता है, परंतु जब स्प्राकिट उल्टी दिशा में घूमता है, या स्थिर होता है तो फ्रीव्हील पहिये को आगे घूमने के लिए मुक्त छोड़ देता है। इस तरह के जुगाड़ से साइकिल पर चढ़ना और उतरना काफी आसान हो जाता है। अगर स्प्राकिट और पहिये के बीच फ्रीव्हील नहीं लगा होता तो यह काम बहुत मुश्किल होता, क्योंकि फ्रीव्हील के बिना पहिये के घूमने के साथ–साथ पैडिल भी हमेशा घूमते। साइकिल का बिना पैडिल चलाए, अपने जड़त्व के कारण ही आगे चलते रहना फ्रीव्हील के बिना संभव नहीं होता।

फ्रीव्हील के अंदर कुछ स्टील के गुटके होते हैं जो स्प्रिंगों से जुड़े होते हैं। इन गुटकों को 'पौल' कहते हैं। दबाने पर प्रत्येक गुटका धुरी के एक खांचे में फंस जाता है और दाब हटने पर वह खांचे से बाहर निकल आता है। उससे मेल खाते, स्प्राकिट में अंदर की ओर बहुत सारे तिरछे दांत (रैचिट) होते हैं। जब स्प्राकिट उल्टी दिशा में घूमता है, उस समय ये गुटके दांतों के तिरछेपन के कारण नीचे दबे

होते हैं और इस कारण स्प्राकिट धुरी पर आसानी से घूम सकता है। परंतु जब स्प्राकिट सीधी दिशा में घूमता है तो स्प्रिंगों से जुड़े ये गुटके खुल जाते हैं और स्प्राकिट के अंदरूनी दांतों में सीधी ओर फंस जाते हैं। यह तब होता है जब साइकिल सवार पैडिल को स्प्राकिट से अधिक तेजी से घुमाता है। इससे चालक की मांसपेशियों की ताकत पहियों को त्वरण प्रदान करती है।

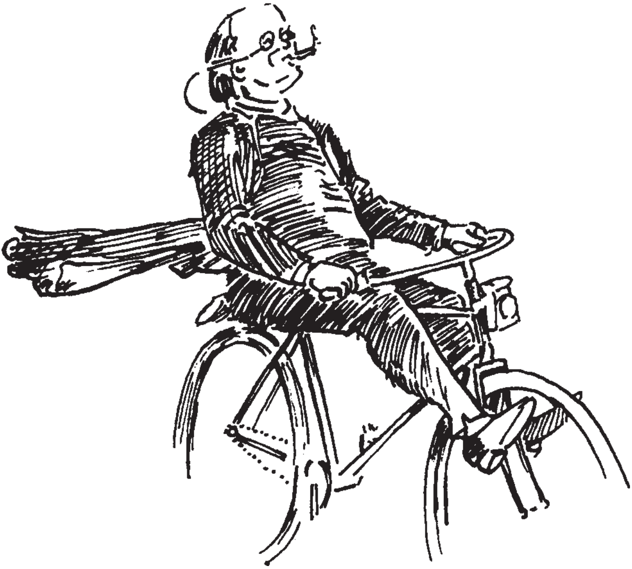

फ्रीव्हील से पहले लगातार चलते पैडिलों से आराम के लिए चालक अपने दोनों पैरों को पांवदान पर रखता था। पांवदान उन साइकिलों में अवश्य लगे होते जिनके चालक आराम की सवारी चाहते थे।

फ्रीव्हील के कारण ही चालक पैडिल पर अपने पैरों को स्थिर रखकर, या फिर उन्हें उल्टा घुमाकर भी, साइकिल पर आगे बढ़ने का आनंद ले सकता है। फ्रीव्हील के लगने के बाद से साइकिलों पर चढ़ना और उनसे उतरना भी सुरक्षित हो गया। अब चालक ढलान पर भी बिना लगातार पैडिल चलाए आसानी से नीचे उतर सकता था।

ब्रेक

साइकिल में फ्रीव्हील के लगने से पहले ब्रेक की कोई जरूरत ही नहीं थी, क्योंकि तब पहिये के साथ–साथ पैडिल भी घूमते थे। साइकिल को ब्रेक करने के लिए पैडिलों को केवल उल्टा घुमाने की जरूरत होती। परंतु इसमें बहुत बल की आवश्यकता होती, खासकर अगर साइकिल सवार तेज रफ्तार से चल रहा होता। इसके कारण किसी पहाड़ी से साइकिल पर नीचे की ओर उतरना बहुत ही जोखिम–भरा खेल हो जाता। शुरू के साइकिल ब्रेकों में सिर्फ एक धातु का चम्मच होता था, जो हाथ के लीवर से दबाने पर साइकिल के अगले पहिये के रिम से रगड़ता था। यह ब्रेक ठोस रबर के टायरों पर तो अच्छा काम करता था, परंतु हवा से भरे टायरों पर इसका बहुत बुरा असर पड़ा।

हवा के टायरों के उद्गम के बाद ही 'स्टिरप ब्रेक' का आविष्कार हुआ। आज भी बहुत–सी साइकिलों में इन्हें इस्तेमाल किया जाता है। इसमें कुछ रबर के गुटके होते हैं, जो रिम के अंदर वाले भाग से रगड़ते हैं। रबर के गुटके और रिम के बीच घर्षण का बल रिम पर हावी होता है और उसे रोकने की कोशिश करता है। यह बल गुटके के पदार्थ और रिम पर उसके द्वारा लगाए दबाव पर निर्भर करता है। इस दबाव को लीवरों के जुगाड़ से बढ़ाया जाता है। इनसे हाथ के ब्रेक–लीवर की गति को ब्रेक के गुटकों

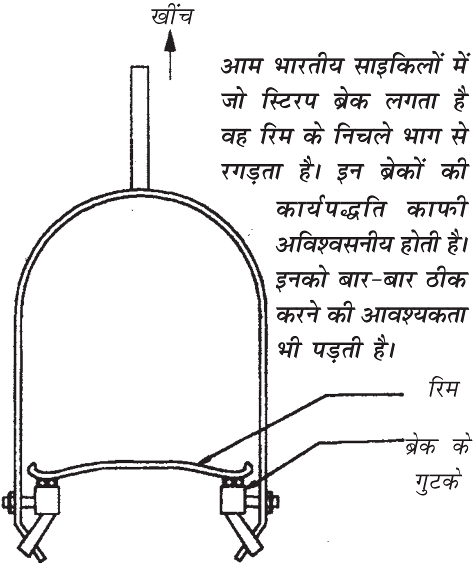

आम भारतीय साइकिलों में जो स्टिरप ब्रेक लगता है वह रिम के निचले भाग से रगड़ता है। इन ब्रेकों की कार्यपद्धति काफी अविश्वसनीय होती है। इनको बार–बार ठीक करने की आवश्यकता भी पड़ती है।

तक पहुंचने में काफी यांत्रिक-लाभ मिलता है।

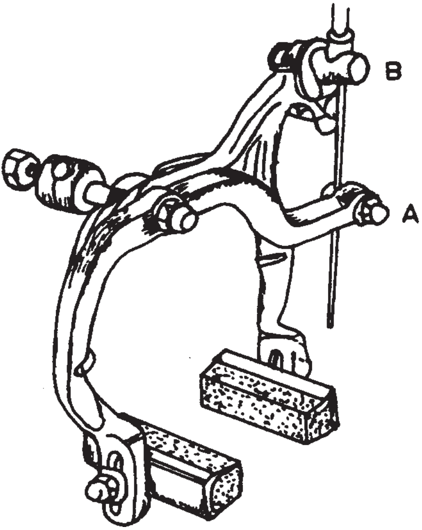

कैलिपर ब्रेक्स रिम की चपटी दीवारों से रगड़ते हैं। इन्हें एक नली के अंदर घुसे ब्रेक तार को खींचकर क्रियान्वित किया जाता है। बाहर वाली नली A और अंदर का तार B से जुड़ा होता है।

परंतु जल्दी ही स्टिरप ब्रेक के स्थान पर कैलिपर ब्रेक आ गए जिनमें ब्रेक के गुटके रिम की अंदर वाली सतह की बजाय चपटी दीवारों को रगड़ते थे। कैलिपर ब्रेकों का सबसे बड़ा फायदा यह है कि इन पर पहिये के गोलाकार न होने का कोई असर नहीं पड़ता है। दूसरी ओर स्टिरप ब्रेकों के साथ एक भारी दिक्कत थी – जहां कहीं भी पहिये के गोले का वक्र बदलता वहां ब्रेक का रिम के साथ संपर्क टूट जाता। साथ में टायर बदलते समय कैलिपर ब्रेक आड़े नहीं आते हैं, जबकि स्टिरप ब्रेकों को रास्ते में से हटाना पड़ता है।

कैलिपर ब्रेकों को एक लचीले तार या केबिल के जरिए चलाया जाता है। केबिल में एक तार होता है जो बाहरी नली के अंदर चलता है। ब्रेक के लीवर को दबाने पर अंदर का तार तनाव (टेंशन) में और

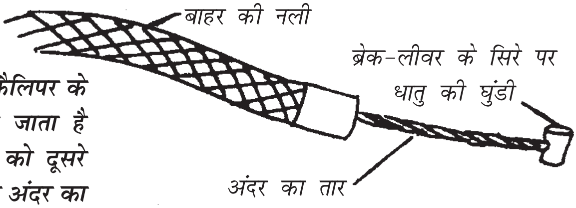

बाहर की नली को कैलिपर के एक हाथ से जोड़ा जाता है और अंदर के तार को दूसरे हाथ से। जब नली के अंदर का तार खींचा जाता है, तब कैलिपर ब्रेक्स पहिये के रिम के किनारों से रगड़ते हैं।

बाहरी नली संपीडन (कंप्रेशन) में आ जाती है। यह तनाव और संपीडन कैलिपर के दोनों आधे हिस्सों पर पड़ता है और उससे ब्रेक के गुटके रिम से जाकर रगड़ते हैं।

अंदर का तार तनाव में और बाहर की नली संपीडन में – यह विधि बहुत से यंत्रों को रिमोट यानि दूरी से चलाने का सबसे प्रभावशाली तरीका है। साइकिल या मोटरसाइकिल में गेयर बदलने का काम, मोटरसाइकिल में क्लच या एक्सिलेटर आदि को भी इसी युक्ति से चलाया जाता है। इसी केबिल को रूपांतरित करके उनसे घूमते हुए पुर्जों का रिमोट नियंत्रण किया जाता है। कार के स्पीडोमीटर में लगने वाला केबिल इस उपयोग का एक उदाहरण है।

गेयर

शुरू में केवल अगले पहिये को सीधे क्रैंक करके चलाया जाता था। तब पैडिल के हरेक चक्कर में अधिक दूरी तय करने का (जिसे गेयर–अनुपात कहते हैं) केवल एक ही विकल्प था और वह था पहिये के व्यास को बढ़ाना। पेनी–फारदिंग साइकिल में इसका उपयोग किया गया था। ऊंचे गेयर–अनुपात के कारण हब पर लगा बल–आघूर्ण, पैडिलों पर लगाए बल–आघूर्ण की अपेक्षा बहुत कम होता था। समतल सड़क पर सवारी करने के लिए तो यह ठीक था, परंतु साइकिल से चढ़ाई चढ़ने या फिर त्वरण बढ़ाने में काफी मुश्किल होती थी।

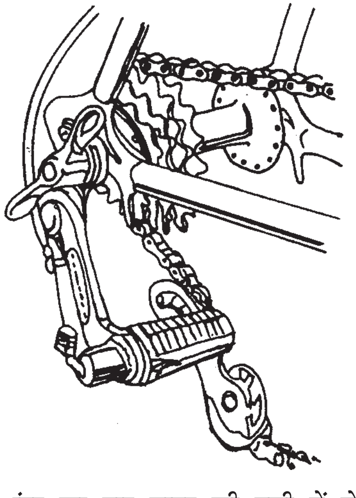

अंदर का तार बाहर की नली में से डिरेलर को एक ओर खींचता है और उससे चेन एक स्प्राकिट से दूसरे पर फिसल जाती है। स्प्रिंग से जुड़ा एक फ्री–रोलर चेन की ढील को दूर करता है।

C_1 32

D_1 26

D_1 21

F_1 17

G_1 14

A_1 40

B_1 52

दस-रफ्तार वाली साइकिल में सामान्य स्प्राकिट और चेन-व्हील की नाप (दांतों की संख्या में)। विभिन्न समायोजनों से अलग-अलग गेयर-अनुपात मिलते हैं, जो न्यूनतम 34 इंच (27 इंच के पहिये द्वारा जमीन पर एक चक्कर लगाने के दौरान तय की दूरी) और अधिकतम 100 इंच होता है। निचले-गेयर चढ़ाई चढ़ने या त्वरण के लिए अच्छे होते हैं। ऊंचे-गेयर सीधी सड़क पर अथवा ढलान से नीचे उतरते समय उपयोग किए जाते हैं।

गेयर-अनुपात मनमर्जी से बदला जा सके, इसके लिए किसी जुगाड़ की आवश्यकता थी। इससे गेयर-अनुपात चढ़ाई चढ़ते समय कम और समतल सड़क पर अधिक किया जा सकता था। पेनी-फारदिंग में इसे कर पाना संभव नहीं था, क्योंकि उसमें गेयर-अनुपात पूरी तरह चलाने वाले अगले पहिये के अनुपात पर निर्भर था।

परंतु चेन द्वारा चलने वाली सुरक्षित साइकिलों में गेयर-अनुपात को आसानी से बदला जा सकता था। गेयर-अनुपात को बदलने के कई तरीके सुझाए गए, परंतु जो तरीका आजकल सबसे अधिक लोकप्रिय हुआ है उसमें पिछले पहिये में विभिन्न व्यास के कई स्प्राकिट व्हील लगे होते हैं। जब चेन बड़े व्यास के स्प्राकिट पर चढ़ी होती है तब गेयर-अनुपात कम होता है। जब चेन छोटे व्यास के स्प्राकिट पर चढ़ी होती है तब गेयर-अनुपात अधिक होता है। स्प्राकिटों के व्यास के बदलने से चेन में आई ढील को एक स्प्रिंगयुक्त घिरनी के जुगाड़ (जिसे 'डिरेलर' कहते हैं) की सहायता से ठीक किया जाता है। जैसे ही गेयर बदलने वाले लीवर को खिसकाया जाता है वह केबिल को खींचता है। केबिल डिरेलर यंत्र को एक ओर खींचता है और उससे चेन एक स्प्राकिट से सरक कर दूसरे स्प्राकिट पर चढ़ जाती है। यह

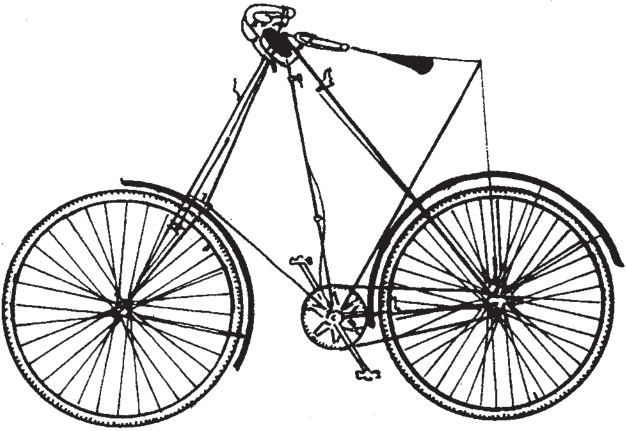

डडले-पेडरसन मॉडल साइकिल सबसे पहले 1907 में बनी। त्रिकोणों में बंटे होने के कारण तब तक बनी साइकिलों में उसका फ्रेम सबसे हल्का था। इसकी झूले जैसी 'हैमक' सीट की भी काफी प्रशंसा हुई। इस साइकिल को अब एक डैनिश कंपनी दुबारा बना रही है।

पूरा जुगाड़ बहुत कुशलता से काम करता है और हल्का होता है, परंतु उसका काफी सावधानी से समायोजन करना पड़ता है। हब में लगे डिरेलर में तीन से पांच स्प्राकिट हो सकते हैं जिससे गति के तीन से पांच 'गेयर-अनुपात' मिल सकते हैं। दस-गतियों वाली साइकिलों में हब में भी लगभग समान तरीके का ही यंत्र होता है, परंतु पैडलों से जुड़े चेन-व्हील में दो अलग व्यासों के चेन-व्हील होते हैं। दो-गतियों की चेन-व्हील और पांच-गतियों के हब के कारण खिलाड़ियों द्वारा इस्तेमाल में लाई जाने वाली स्पोर्टस साइकिलों में दस-गतियां होती हैं।

फ्रेम

साइकिलों के फ्रेम में साल-दर-साल काफी विकास हुआ है। आजकल की नवीन साइकिलों का बर्फीनुमा ट्यूबलर फ्रेम पुराने हॉबी हार्स के लकड़ी के तख्तों के बने फ्रेम से बहुत भिन्न है। नया फ्रेम मजबूत होने के साथ-साथ बहुत हल्का भी है। फ्रेम के इस किफायती डिजाइन में ढांचों के एक बुनियादी सिद्धांत का उपयोग किया गया है। ढांचे का भाग सबसे कमजोर तब होता है जब, जिस भार को वह

संभालता है वह उसे मोड़ने का प्रयास करता है। अगर ढांचे के भाग के ऊपर भार होगा तो भाग संपीडन में होगा और वह बहुत अधिक भार को संभाल पाएगा। अगर ढांचे के प्रत्येक भाग को तनाव सहने वाले केबिल लगाकर मजबूती प्रदान की जाए तो यह एक बेहतर तरीका होगा। इसलिए सबसे हल्का ढांचा तब बनेगा जब उसका हरेक भाग भार के संपीडन और तनाव को सहने में सक्षम होगा। परंतु यह ढांचा मुड़न (बेंडिंग) सहने में अक्षम होगा। इस प्रकार का ढांचा बहुत सारे त्रिभुजों का बना होगा। बड़ी-बड़ी क्रेनों, छतों की कैंचियों और स्टील के बने पुलों के निर्माण में इन्हीं त्रिकोणों की विधि अपनायी जाती है। नवीन साइकिलों का बर्फीनुमा फ्रेम भी काफी हद तक त्रिभुजों में बंटा होता है। त्रिभुजीकृत फ्रेम की इस परिणिति को 1907

मोल्टन साइकिलों का क्रॉस-फ्रेम सरल तो था, परंतु उसमें त्रिकोणीकृत फ्रेम जैसी मजबूती नहीं थी। आगे से फ्रेम के खुला होने के कारण साइकिल का भार बढ़ा है।

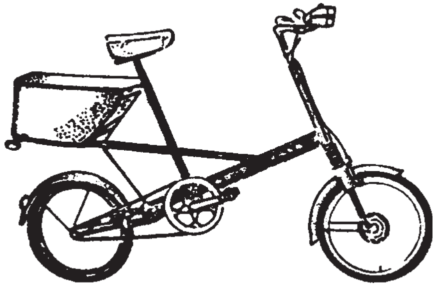

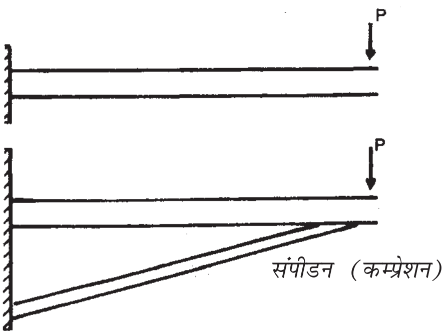

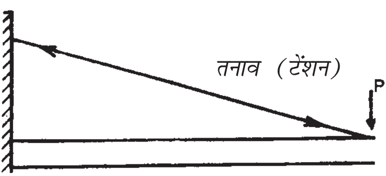

ऊपर के चित्र में ढांचा झुककर भार को झेलता है। बाकी उदाहरणों में झुकना कम हो जाता है और उनसे बहुत अधिक कार्यकुशल ढांचे बनते हैं।

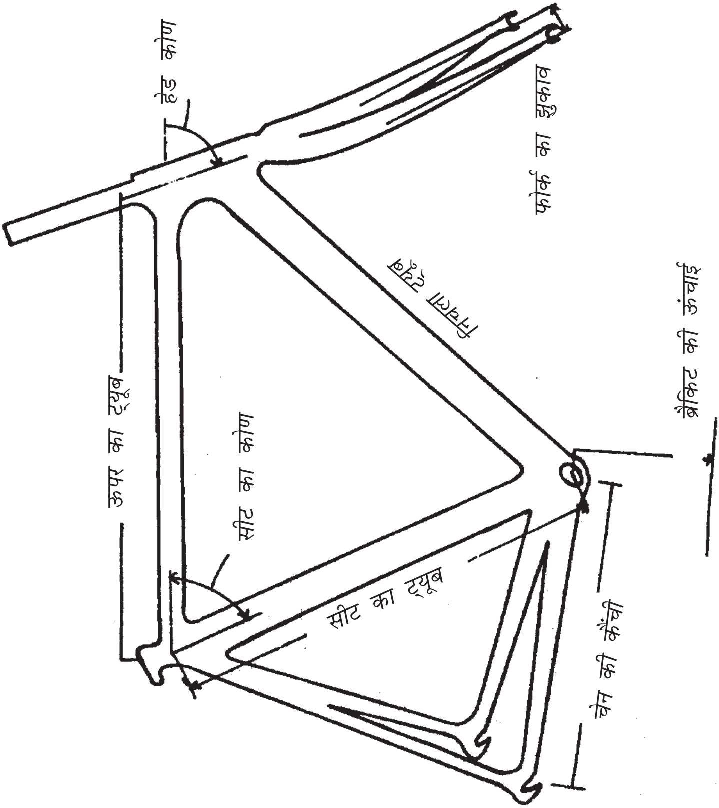

स्थापित बर्फीनुमा फ्रेम त्रिकोणीकृत और काफी कार्यकुशल है। पिछले 100 सालों में मशहूर मोल्टन फ्रेम के अलावा यह एक मानक फ्रेम रहा है। मोल्टन फ्रेम इतना मजबूत नहीं होता है, परंतु उसके कई अन्य फायदे हैं।

की डडले–पेडरसन साइकिल में देखा जा सकता था। यह साइकिल बहुत हल्की थी और इसके पूरे फ्रेम का भार कुल 6.4 किलोग्राम ही था।

बर्फीनुमा फ्रेम सबसे पहले 1887 में बनाए गए और उसके पश्चात लगभग सभी साइकिलों के फ्रेम उसी आधार पर बन रहे हैं। इसमें अगर कोई अपवाद है तो वह है 1964 में बनी मोल्टन साइकिल, जिसका फ्रेम X आकार का है। इसका फ्रेम बर्फीनुमा फ्रेम की तुलना में भारी है, परंतु मोल्टन साइकिल के फ्रेम के कुछ अन्य लाभ हैं। इसे महिलाएं, स्कर्ट पहनकर भी चला सकती हैं और शायद यही उसकी लोकप्रियता का कारण भी है।

फ्रेम के भार को कम करने के लिए उसके विभिन्न भागों को खोखले ट्यूबों से बनाया गया है। बांस के गुणधर्म किसी खोखले ट्यूब के गुणधर्मों से बहुत मिलते–जुलते होते हैं। बांस अपने भार की ठोस लकड़ी की बल्ली की तुलना में दुगना भार सह सकता है।

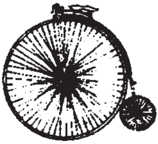

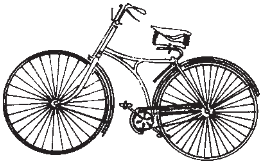

साइकिल का विज्ञान

बल और शक्ति

किसी भी गाड़ी के डिजाइन में हमें सबसे पहले उसपर लगे बलों और शक्ति की गणना करनी होती है। जब कभी कोई वस्तु किसी सतह पर चलती या लुढ़कती है तब उसपर कई ऐसे बल लगते हैं जो उसकी गति का विरोध करते हैं। इन विरोधी बलों पर काबू पाने के लिए हमें कुछ बल लगाना पड़ता है। वस्तु में त्वरण लाने के लिए और अधिक बल लगाने की जरूरत होती है। जितना अधिक वस्तु का भार होता है और जितना ही अधिक त्वरण होता है, उतना ही अधिक बल लगाने की जरूरत होती है। इसलिए जो खिलाड़ी साइकिल दौड़ों में

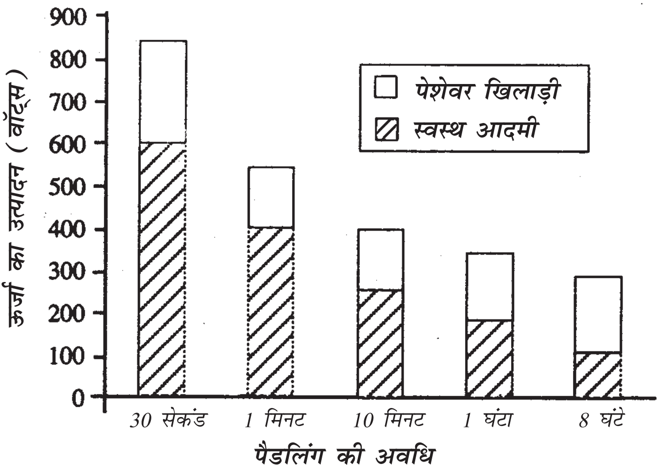

पैडलिंग की अवधि का ऊर्जा उत्पादन पर प्रभाव। रेखाचित्र से पता चलता है कि लंबी अवधि की तुलना में, कम अवधि में ऊर्जा का उत्पादन छह गुना अधिक हो सकता है। आराम से साइकिल चलाने में 60 वॉट ऊर्जा व्यय होती है।

भाग लेते हैं, उन्हें तेज त्वरण के लिए तीन चीजें करनी होती हैं :

- प्रतिरोध को कम-से-कम करना।
- भार को कम रखना।
- अधिक-से-अधिक बल लगाना।

क्योंकि चढ़ाई चढ़ते समय शरीर के भार को भी ऊपर उठाना पड़ता है, इसलिए चालक को बहुत अधिक बल लगाना पड़ता है। हमने सीखा है कि निचले गेयर द्वारा हम अधिक बल लगा सकते हैं। इसलिए साइकिल शुरू करते समय तब हम निचले गेयर में होते हैं और रफ्तार पकड़ने के साथ-साथ ऊंचे गेयर में चले जाते हैं। गति तेज होने के बाद हमें त्वरण की जरूरत भी नहीं रहती है। इसी प्रकार ढाल पर नीचे उतरते समय हमें निचले गेयर की आवश्यकता होती है।

शक्ति (पावर) का संबंध गति के दौरान ऊर्जा की खपत दर से

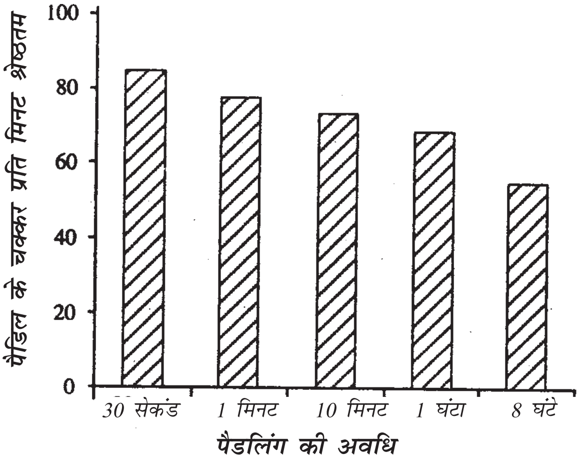

अधिकतम ऊर्जा एक आदर्श पैडलिंग की रफ्तार (चक्कर प्रति मिनट) पर मिलती है, परंतु यह अवधि की लंबाई के साथ-साथ घटती जाती है। स्वस्थ आदमियों के लिए 50 पैडिल के चक्कर प्रति मिनट गति की सिफारिश की गई है। साइकिल दौड़ों में खिलाड़ी कम अवधि के लिए अक्सर 150 चक्कर प्रति मिनट की गति तक पहुंच जाते हैं।

होता है। वह प्रतिरोध बल और चलने की रफ्तार पर निर्भर करती है। जितना अधिक बल और रफ्तार होगी, उतनी ही ज्यादा शक्ति की जरूरत होगी। साइकिल के पैडिल चलाने के दौरान गति की शक्ति मनुष्य रूपी इंजन की मांसपेशियों से ही मिलती है। मांसपेशियां ईंधन की कोशिकाएं जैसी होती हैं, जो भोजन की रासायनिक ऊर्जा को क्रैंक की यांत्रिक ऊर्जा में परिवर्तित करती हैं। साइकिल की रफ्तार को मांसपेशियों द्वारा शक्ति उत्पन्न करने की क्षमता ही सीमित करती है।

हमारे शरीर की कार्यप्रणाली काफी जटिल होती है। अगर हम एक साथ बहुत अधिक शक्ति चाहें तो वह हमें केवल छोटी-सी अवधि के लिए ही मिल सकती है। लंबी अवधि के लिए निरंतर मिलने वाली शक्ति की मात्रा इससे कहीं कम होगी। इसलिए कम अवधि में मिली रफ्तार लंबी अवधि की रफ्तार से बहुत अधिक होगी। समय बढ़ने के साथ-साथ शक्ति उत्पन्न करने की क्षमता किस प्रकार तेजी से घटती जाती है, इसे एक चार्ट में दिखाया गया है। एक साधारण साइकिल चालक लगातार और कायम तौर पर औसतन 50 वॉट शक्ति का उत्पादन कर सकता है।

शक्ति का लेखा-परीक्षण

जरा हम देखें कि साइकिल चलाने में कितनी ऊर्जा व्यय होती है। जब साइकिल चालक रुकी स्थिति से शुरू करता है तो उसके द्वारा व्यय की गई ऊर्जा विभिन्न घर्षण-बलों पर काबू पाने और त्वरण की गतिज ऊर्जा के रूप में बदल जाती है। जब चालक चढ़ाई पर पैडिल करता है तो ऊंचाई बढ़ने की वजह से ऊर्जा का एक भाग उसकी स्थितिज ऊर्जा को बढ़ाने में भी खर्च हो जाता है।

पहले हम समतल सतह पर स्थिर गति से दौड़ते चालक पर गौर करें। इस समय चालक की समस्त ऊर्जा विभिन्न घर्षण के बलों को काबू करने में खर्च होगी। इसमें से अधिकांश ऊर्जा टायर के लुढ़कने

के घर्षण में व्यय होगी। आमतौर पर घर्षण बलों की कुल मात्रा 4 न्यूटन होगी, जिससे 18 किमी/घंटे (या 5 मीटर/सेकंड) की रफ्तार पर करीब 20 वॉट खर्च होंगे। यह ऊर्जा रफ्तार बढ़ने के अनुपात में बढ़ेगी यानि रफ्तार दुगनी होने पर यह ऊर्जा भी दुगनी हो जाएगी।

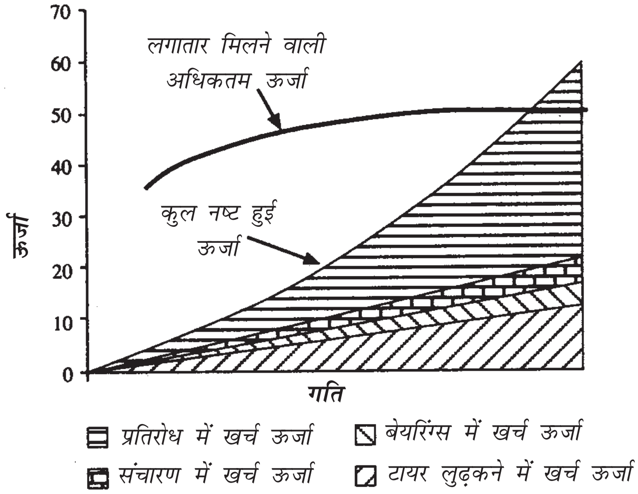

जिस क्षेत्र में उपलब्ध ऊर्जा खर्च हुई ऊर्जा से अधिक होगी वहां उसका अंतर साइकिल और चालक की गतिज ऊर्जा को बढ़ाने का काम करेगा। अधिकतम रफ्तार तब होगी जब व्यय हुई सारी ऊर्जा कुल उपलब्ध ऊर्जा को खर्च कर देगी।

अलग-अलग बॉल-बेयरिंग्स में बहुत कम ही ऊर्जा नष्ट होती है और एक अनुमान के अनुसार इसकी मात्रा 1 वॉट से भी कम होती है। साइकिल में शक्ति संचारित करने वाली चेन और उसके रगड़ खाते अलग-अलग अंजर-पंजरों और स्प्राकिट में कुल मिलाकर करीब 3 वॉट ऊर्जा खर्च होती है। इन सबको जोड़ने पर 24 वॉट बनते हैं जो चालक द्वारा पैदा की गई ऊर्जा का लगभग आधा है। बाकी आधी ऊर्जा कहां जाती है? जरा उस पर भी नजर डालें।

हवा का प्रतिरोध

हवा में से गुजरती हरेक वस्तु पर एक प्रतिरोधी बल लगता है जिसे 'ड्रैग' कहते हैं। अगर आप हवा की उल्टी दिशा में चल रहे हों तो आप इस बल को महसूस कर सकते हैं। आमतौर पर साइकिल जिस रफ्तार से चलती है उसमें यह प्रतिरोध गति के वर्ग के अनुपात में होता है। इसलिए जब गति दुगनी होती है तो प्रतिरोध की मात्रा चौगुनी हो जाती है। यह बहुत अधिक बढ़त है और एक निश्चित प्रयास के लिए यही साइकिल सवार की अधिकतम गति निर्धारित करती है।

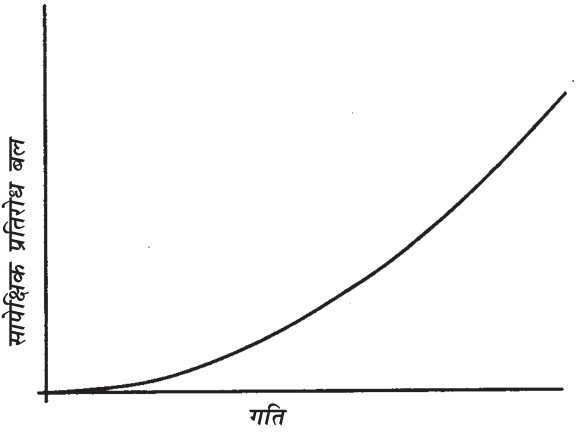

हवा के प्रतिरोध का बल गति के वर्ग के अनुपात में होता है।

विज्ञान के सर्वेक्षण से पता चला है कि चालक जब सामान्य बैठे हुए साधारण साइकिल को चलाता है तो उसपर लग रहा हवा का प्रतिरोध (ड्रैग) निम्न सूत्र के समीप होता है :

प्रतिरोध बल (न्यूटन में) = 0.015 X गति X गति

और उसके द्वारा व्यय की गई ऊर्जा की मात्रा होगी

प्रतिरोध शक्ति (वॉट्स में) = 0.004 X गति X गति X गति

यहां गति किलोमीटर प्रति सेकंड में मापी जाएगी।

इसलिए ड्रैग को काबू में लाने के लिए ऊर्जा की मात्रा, जो 5 किमी / घंटे पर केवल 0.5 वॉट्स थी, 10 किमी / घंटे पर 4 वॉट्स और 15 किमी / घंटे पर 13.5 वॉट्स हो जाएगी। 18 किमी / घंटे की रफ्तार पर ड्रैग बढ़कर 23.3 वॉट्स हो जाएगी। यह मात्रा बाकी सब हानियों के बराबर होगी।

हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ऊपर दिया सूत्र साइकिल को केवल स्थिर हवा में चलाने के लिए ही वैध है। दरअसल ड्रैग शरीर के सापेक्ष हवा की गति पर निर्भर करता है। इसलिए अगर चालक की दिशा में हवा 5 किमी / घंटे की गति से चल रही हो तो वह स्थिर हवा की तुलना में 5 किमी / घंटे की कम हानि महसूस करेगा। इस चर्चा से यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि अंततः साइकिल चालक की गति हवा के प्रतिरोध द्वारा सीमित होती है। इसलिए अपनी गति बढ़ाने के लिए चालक को हवा के प्रतिरोध को कम-से-कम करने का प्रयास करना चाहिए। तेज गति वाली कारों और हवाई जहाजों के डिजाइन अनुभव से हमें यह पता है कि ड्रैग बल चलने वाली वस्तु के 'अगले' भाग के क्षेत्रफल और उसके आकार की वक्रता पर निर्भर करता है (इसके अलावा यह बल वस्तु की गति पर तो निर्भर करता ही है)। इसी वजह से दौड़ों में भाग लेने वाले साइकिल सवार अपने शरीर को साइकिल

चालक अपने आगे के क्षेत्रफल को झुककर कम कर सकता है और हवा के प्रतिरोध को घटाकर अपनी गति बढ़ा सकता है।

के हैंडिलों पर झुकाते हैं जिससे सामने से आती हवा के बहाव का प्रकोप कुछ कम हो। अगर साइकिल सवार लेटी स्थिति में होगा तो उसका कम क्षेत्रफल हवा के संपर्क में आएगा और इस युक्ति को नयी साइकिलों के कुछ डिजाइनों में उपयोग किया गया है। अपने 'सामने' के क्षेत्रफल को कम करने के लिए साइकिल रेस चालक एकदम चुस्त कसे हुए कपड़े पहनते हैं।

शरीर की रूपरेखा भी हवा के प्रतिरोध को निर्धारित करने में काफी महत्वपूर्ण होती है। रेसिंग कारों की गोलाई लिए हुए निष्कोण आकार की तुलना अगर आप पुरानी कारों के आकार से करें तो यह अधिक स्पष्ट हो जाएगा। इसे सूंस मछली (डौल्फिन) के आंसू की बूंद जैसे आकार से भी समझा जा सकता है, जिसका हवाई जहाजों के डिजाइनरों ने बखूबी इस्तेमाल किया है। इस प्रकार के प्रवाह-रेखीय (स्ट्रीम लाइंड) आकार से ड्रैग के प्रतिरोध को कम किया जा सकता है। अगर किसी गोलाकार वस्तु के पीछे एक धीरे-धीरे पतली होती पूंछ जोड़ दी जाए तो उससे ड्रैग के बल को सौ-गुना कम किया जा सकता है।

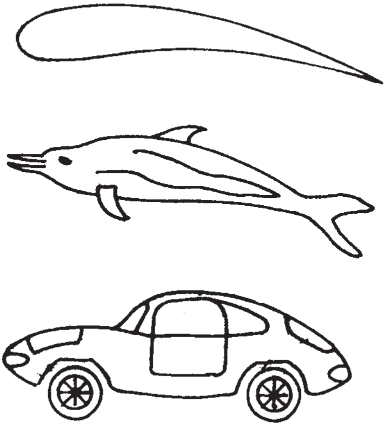

वस्तु के आकार को प्रवाह-रेखीय (स्ट्रीम लाइंड) बनाकर प्रतिरोध को कम किया जा सकता है। ऐसा ऐयरोफाइल, डौल्फिन और उच्च कार्यक्षमता वाली मोटरकारों में किया जाता है।

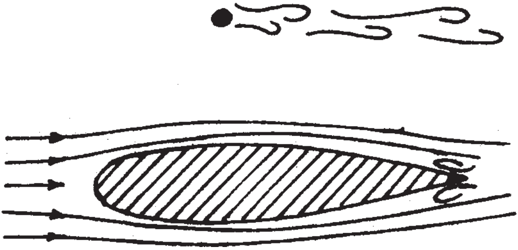

किसी ऐयरोफाइल और उसके एक-दसवें क्षेत्रफल (अगले) की बेलनाकार वस्तु का प्रतिरोध एक जैसा होगा।

हैंडिल की गोलाई के कारण कुछ प्रवाह-रेखीय (स्ट्रीम लाइनिंग) असर अवश्य पड़ता है। प्रतिरोध कम करने से गति को 10 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है।

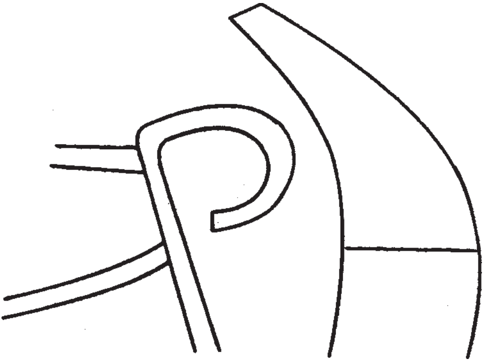

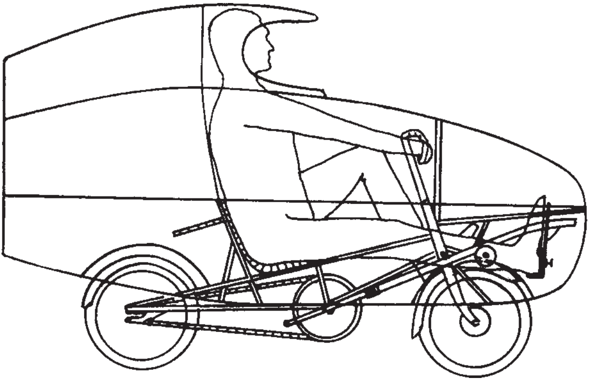

साइकिल के चारों ओर एक प्रवाह-रेखीय (स्ट्रीम लाइंड) कवच लगाने से हवा के प्रतिरोध को बहुत कम किया जा सकता है। चालक की आधी लेटी स्थिति से अगला क्षेत्रफल कम और प्रतिरोध भी कम होता है।

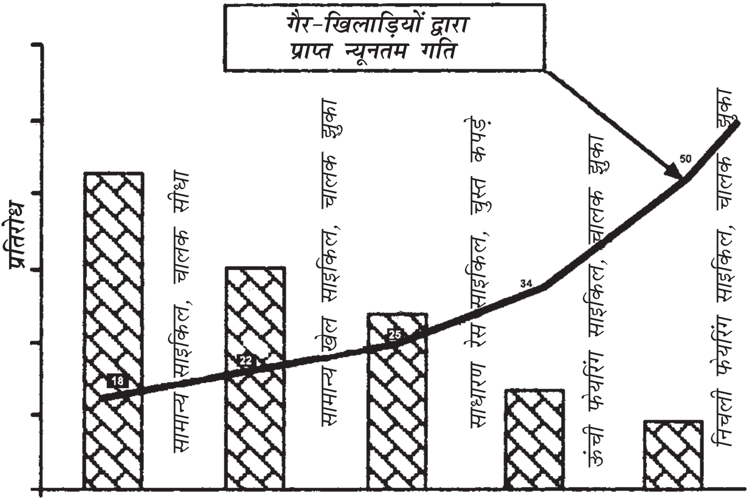

विभिन्न साइकिलों के आकारों और चालक की स्थितियों के सापेक्षिक प्रतिरोध। संख्याएं औसत अधिकतम गति दर्शाती हैं जो एक गैर-खिलाड़ी आदमी लगातार साइकिल चलाने के दौरान प्राप्त कर सकता है। गति में ज्यादातर तेजी प्रतिरोध के कम होने के कारण आती है।

इस सारी जानकारी को साइकिल के डिजाइन के लिए किस प्रकार उपयोग किया जा सकता है? यह काम बहुत आसान नहीं होगा। मनुष्य के शरीर की रूपरेखा बिल्कुल प्रवाह-रेखीय (स्ट्रीम लाइंड) नहीं होती है। परंतु चालक और साइकिल को आंसू की बूंद के आकार के कवच में बंद करके हम प्रतिरोध को कम करने का लाभ अवश्य ले सकते हैं। इस दिशा में कुछ नए प्रयास हुए हैं (जिनमें चालक के अगले भाग का क्षेत्रफल कम करने के लिए उसे लिटाया जाता है) और उनसे अधिकतम गति प्राप्त करने में अभूतपूर्व सफलता भी मिली है। परंतु इस प्रकार की गाड़ियों को चलाने की निपुणता के कारण इनका उपयोग अभी केवल तेज रफ्तार के रिकार्ड तोड़ने और सहनशक्ति के परीक्षण के रूप में ही हुए हैं।

चढ़ाई पर साइकिल चलाना

चढ़ाई पर साइकिल चलाते समय चालक को साइकिल के साथ-साथ खुद अपने भार को भी ऊपर उठाना पड़ता है और इस वजह से उसे केवल प्रतिरोध पर काबू पाने की तुलना में अधिक बल लगाना पड़ता है। इस कारण चढ़ाई पर साइकिल चलाना बहुत कठिन हो जाता है। हां, अगर साइकिल में गेयर का प्रावधान हो तो सवार निचले गेयर में आकर अधिक यांत्रिक-लाभ का फायदा ले सकता है (परंतु इस स्थिति में गति-अनुपात कम होगा)। इसके परिणामस्वरूप वह धीरे-धीरे, परंतु कुछ आसानी से ऊपर चढ़ सकेगा।

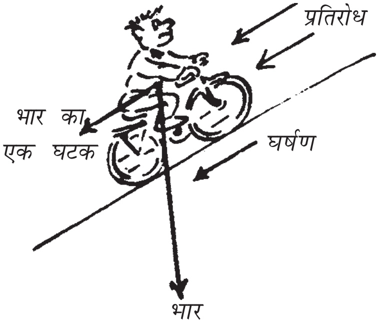

चढ़ाई पर चढ़ते समय पैडलिंग के बल को हवा के प्रतिरोध, घर्षण बल और भार के एक घटक पर काबू करना पड़ेगा।

ऊर्जा के लेखा-परीक्षण में अब एक नया शब्द जुड़ जाएगा। चालक जैसे-जैसे चढ़ाई पर चढ़ेगा, उसकी स्थितिज-ऊर्जा बढ़ती जाएगी; परंतु यह ऊर्जा भी मांसपेशियों से ही आएगी। इससे प्रतिरोध पर काबू करने के लिए ऊर्जा में कमी आएगी और इससे चालक समतल जमीन की तुलना में कम तेजी से ही साइकिल चला पाएगा।

हवा के प्रतिरोध (ड्रैग) में काफी मात्रा में ऊर्जा व्यय होती है, और क्योंकि यह प्रतिरोध शरीर के सापेक्ष हवा की गति पर निर्भर करता है, एक अत्यंत रोचक स्थिति उत्पन्न होती है। यह तब होता है जब हवा चढ़ाई की दिशा में बह रही हो। इससे चढ़ने में उस हद तक आसानी होगी जिससे प्रतिरोध पर काबू पाने की बचत बढ़ी हुई स्थितिज-ऊर्जा की कीमत का प्रतिकार नहीं करे। दूसरी ओर, अगर हवा सामने से आ रही हो तो हवा के प्रतिरोध पर काबू पाने के लिए

अधिक ऊर्जा व्यय करनी होगी, जो शायद नीचे ढलान पर उतरते वक्त मिली स्थितिज-ऊर्जा से अधिक हो।

ब्रेकिंग

साइकिल में ब्रेक घर्षण वाले पदार्थ (सामान्यतः रबर) के रिम की अंदर वाली या बाहर की सतह के साथ रगड़ने से लगता है। इससे पहिया एक ओर घूमने से बचता है और इसके परिणामस्वरूप टायर सड़क पर लुढ़कने की बजाय घिसटता है। हमने पहले देखा था कि घिसटने का घर्षण लुढ़कने की अपेक्षा सौ-गुना अधिक होता है। जमीन और घिसटते टायर के बीच इसी बल के कारण साइकिल धीमी होकर रुकती जाती है।

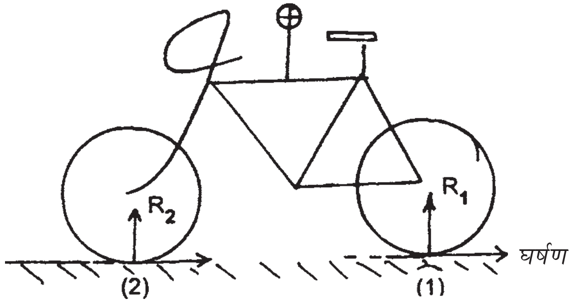

सड़क पर लग रहे घर्षण बल के कारण साइकिल बिंदु (2) पर घूमती है। अगले पहिये के ब्रेक को बड़ी सावधानी से लगाना चाहिए।

ब्रेक लगाते समय थोड़ी सावधानी बरतनी होती है। अगर ब्रेक की पूरी ताकत लगाकर दोनों पहियों को एक-साथ रोका जाए तो उससे जमीन का ताकतवर घर्षण बल एक बल-आघूर्ण पैदा करेगा, जिससे साइकिल और चालक झटके के साथ अगले पहिये के ऊपर गिर सकते हैं। इसी कारण जब तक साइकिल की गति धीमी न हो जाए, तब तक अगला ब्रेक नहीं लगाने की हिदायत दी जाती है। हां, अगर कोई आकस्मिक स्थित आ जाए, तो बात अलग है।

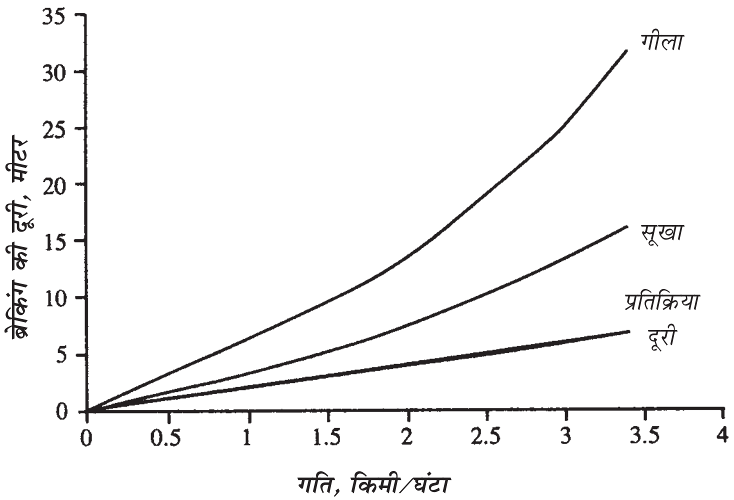

गीली सड़कों पर ब्रेकिंग दूरी सूखी सड़कों की तुलना में बहुत अधिक होती है। इसलिए बारिश में साइकिल चलाते समय बहुत सावधानी बरतनी चाहिए।

बारिश के दिनों में साइकिल के ब्रेक बहुत अविश्वसनीय हो जाते हैं। जब ब्रेक के गुटके गीले होते हैं तो गुटकों और रिम के बीच घर्षण का गुणांक बहुत कम हो जाता है और गीली साइकिल को जल्दबाजी में रोकना मुश्किल हो जाता है। कुछ ऐसे ब्रेक विकसित किए गए हैं जो हब के अंदरूनी भाग में फिट हो जाते हैं। ये ब्रेक बारिश से सुरक्षित रहते हैं, परंतु आम उपयोग के लिए इन्हें महंगा और भारी पाया गया है।

स्थिरता

किसी भी बच्चे या वयस्क के लिए 'हाथ छोड़कर' साइकिल चलाने से अधिक रोमांचक अन्य कोई अनुभव नहीं हो सकता है। हैंडिल को पकड़े रखने पर भी यह बड़े आश्चर्य की बात है कि

केवल दो पहियों वाली यह गाड़ी खड़ी रह कर ऊबड़-खाबड़ सड़कों पर चल सकती है।

अगर साइकिल बायीं ओर झुकती है तो चालक भी थोड़ा-सा बायीं ओर झुकता है और उससे साइकिल अपने आप सीधी हो जाती है। साइकिल चालक इसे खुद अपने-आप करना सीख जाता है।

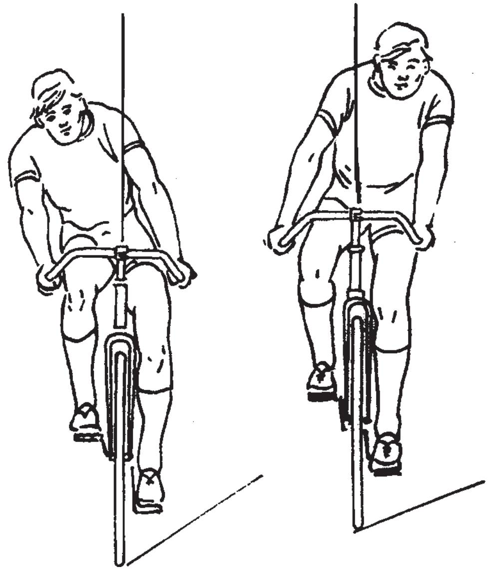

हरेक चालक को यह बात पता होती है कि साइकिल का संतुलन बनाए रखने के लिए उसका गिरती स्थिति में परिचालन करना पड़ता है, बिल्कुल उसी तरह जैसे कोई जादूगर अपनी उंगली पर किसी झाड़ू को संतुलित करता है। अगर साइकिल बायीं को गिर रही हो, तब अगले पहिये को बायीं ओर उन्मुख किया जाता है, और इससे साइकिल अपने-आप सीधी हो जाती है। परंतु इसे केवल साइकिल सीखने के दौरान ही सचेतन रूप से करने की जरूरत होती है। जैसे-जैसे चालक का आत्मविश्वास बढ़ता है, वह केवल आराम करता है। ऐसा लगता है जैसे उन्मुखीकरण का यह सुधार साइकिल खुद ही कर लेती है। और वास्तव में ऐसा होता भी है, जब चालक दोनों हाथ छोड़कर साइकिल चलाता है। साइकिल गिरने की स्थिति से अपने-आपको कैसे रोकती है और फिर कैसे सीधी हो जाती है?

यह एक बहुत जटिल प्रश्न है, क्योंकि पूरे स्टेयरिंग की रचना और उसकी ज्यामिति काफी जटिल होती है। प्रयोगों से यह पता चला है कि साइकिल कई जटिल परस्पर–संबंधों के कारण ही अपने आपको सीधा कर पाती है। इसमें मुख्य हैं स्टेयरिंग की दोनों ट्यूबों का एक कोण पर मुड़ा होना (इसे स्टेयरिंग–हेड का कोण कहते हैं), आगे वाले फोर्क (दो शाखाओं) का मुड़ा होना (जिसका परिणाम स्टेयरिंग–हेड कोण होता है) और साइकिल के फ्रेम का उर्ध्वाधर से झुका होना। हेड के कुछ कोणों और फोर्क के मोड़ के कुछ संयोजनों के कारण स्टेयरिंग अपने–आप सीधा हो जाता है। स्टेयरिंग के खुद–ब–खुद मुड़ने का यही एक कारण है। इन परिस्थितियों में स्टेयरिंग के घूमने से फ्रेम की कुल ऊंचाई घट जाती है, और यह तो हम सभी को पता है कि हर वस्तु की प्राकृतिक प्रवृत्ति अपने गुरुत्व के केंद्र की ऊंचाई को न्यूनतम रखने की होती है।

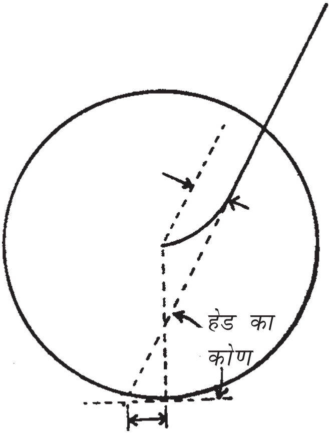

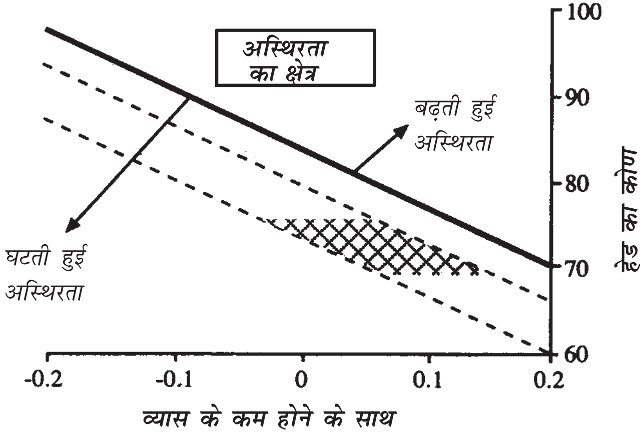

साइकिल स्थिर होनी चाहिए, परंतु बहुत स्थिर भी नहीं। अधिकांश काम में लायी जाने वाली साइकिलें रंगे हुए क्षेत्र में आती हैं। हेड कोण की सीमा पहियों और पैडिल के बीच का स्थान निर्धारित करती है और इससे ही स्टेयरिंग की आसानी तय होती है।

चलती रहने पर सीधी खड़ी रहने के गुणधर्म को ही हम साइकिल की स्थिरता कहते हैं। हम साइकिल की इस स्थिरता को दो तरीकों से बढ़ा सकते हैं – हेड कोण को बढ़ाकर या फिर फोर्क के कोण को घटाकर – उसे ऋणात्मक बनाकर भी। परंतु स्थिरता ही सबकुछ नहीं होती। हम एक इतनी स्थिर साइकिल बना सकते हैं जिससे उसे किसी घूमती, टेढ़ी–मेढ़ी सड़क पर घुमाने में दिक्कत आए। ऐसी साइकिल सिर्फ सड़क पर सीधा चलना पसंद करेगी और आपकी मनमर्जी के अनुसार इधर–उधर मुड़ेगी नहीं। इसीलिए वास्तविक इस्तेमाल में केवल कुछ ही हेड–कोण (72–74 अंश) और फोर्क–मोड़ (पहिये के व्यास का 6–8%) ही उपयुक्त होंगे। फोर्क–मोड़ कम करने से साइकिल की स्थिरता अवश्य बढ़ेगी, परंतु उसके हैंडिल को इधर–उधर मोड़ने के लिए ज्यादा बल भी लगाना होगा।

साइकिल – मनुष्य के शरीर के लिए बनी एक मशीन

बहुत ही चतुर यंत्रों और पुर्जों के इस्तेमाल और भौतिकी के सिद्धांतों के उपयोग के कारण ही साइकिल अपने वर्तमान रूप में विकसित हो पायी है। परंतु साइकिल अपने कुल पुर्जों के जोड़ से कहीं अधिक है। साइकिल की अत्यधिक कार्यकुशलता के कई कारण हैं – उसका हल्का वजन, बॉल–बेयरिंग्स और रोलर–चेन के कारण कम घर्षण और हवा से भरे रबर के टायरों के कारण लुढ़कने का न्यूनतम घर्षण। साइकिल की कार्यकुशलता का वैसे प्रमुख कारण उसका मनुष्य के शरीर से पूरी तरह मेल–जोल होना है।

जैसा कि मनुष्य को चलते या दौड़ते समय करना पड़ता है, साइकिल चालक को अपने पैरों से शरीर का भार नहीं ढोना पड़ता है। पैर की सबसे महत्वपूर्ण मांसपेशियां अब सिर्फ गति का काम ही करती हैं, न कि धड़ के भार को संभालने का। पैडलिंग का काम जांघों की मांसपेशियां करती हैं, जो शरीर की सबसे ताकतवर मांसपेशियां होती हैं। चलते समय पूरा शरीर एक खड़े तल में दोलन करता है, जिससे ऊर्जा बेकार में खर्च होती है। परंतु साइकिल चलाने के दौरान धड़ स्थिर रहता है और केवल टांगें ही गोल गति में आसानी से घूमती हैं और सिर्फ जांघें ही ऊपर–नीचे होती हैं। साइकिल फ्रेम की ज्यामिति कुछ ऐसी होती है जिससे टांगें सीधे आकर पैडिल पर प्रहार करती हैं और मांसपेशियों के बल का अधिकतम उपयोग करती हैं। हैंडिल और सीट के स्थान भी ऐसे हैं (और उन्हें ठीक किया जा सकता है) कि दोनों हाथ लगभग सीधे होते हैं और वे शरीर को सहारा देते हैं, परंतु बिना अधिक थकान के। साइकिल दौड़ों में भाग लेने वालों का बैठने का तरीका कुछ कम आरामदेह होता है, परंतु ये लोग कुछ अलग किस्म के होते हैं – इन्हें आराम से अधिक प्रदर्शन में मजा आता है।

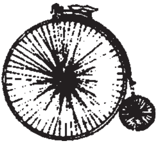

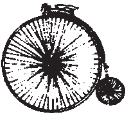

कुछ रोचक वेबसॉइट्स

www.exploratorium.edu/cycling

साइकिल के विभिन्न पक्षों के लिए एक अच्छा स्रोत। इस सॉइट पर खेलों के विज्ञान और कला–संबंधी पक्षों का बहुत ही श्रेष्ठ तरीके से परिचय कराया गया है। यह सॉइट वाकई देखने योग्य है।

www.science.uva.nl/research/amstel/bicycle

साइकिल के वैज्ञानिक और सांस्कृतिक पक्षों से संबंधित। सीखने के लिए एक महत्वपूर्ण स्रोत।

www.pedalinghistory.com

साइकिल–संबंधी खेल और गति के पक्षों के लिए एक उत्तम स्रोत।

www.bicyclepaintings.com

ऐतिहासिक साइकिलों की कुछ बहुत कलात्मक पेंटिंग्स का संकलन।

www.state.il.us/kids/isp/bikes/default.htm

क्या आप साइकिल चलाना सीख रहे हैं? कुछ नियम एवं हिदायतें।

www.ctuc.asn.au/bicycles

यह कैनबेरा बाइसिकिल म्यूजियम और संसाधन केंद्र की सॉइट है।

www.cycling.org/lists/hardcore-bicycle-science

साइकिल के विज्ञान का बहुत सुंदर विवरण।

www.ibike.org/historymuseum.htm

अंतर्राष्ट्रीय साइकिल फंड की वेबसॉइट।

www.bicyclemuseum.com

बाइसिकिल म्यूजियम ऑफ अमरीका का होमपेज।

साइकिल के इतिहास की समय-रेखा

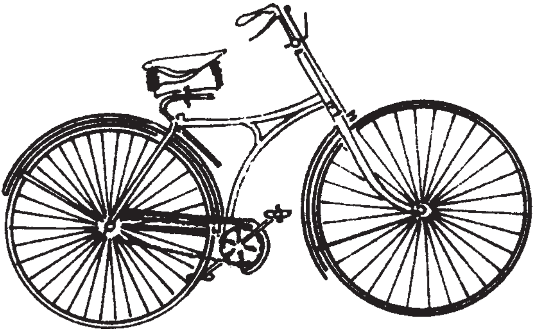

1791 : सबसे पहली साइकिल, जिसमें एक लकड़ी के फट्टे के दोनों ओर एक-एक पहिया लगा था। सवार फट्टे पर बैठकर अपने पैरों से जमीन को धक्का देकर साइकिल चलाता था।

1817 : बैरन फान ड्रायस अगले पहिये पर हैंडिल लगाता है। हॉबी-हार्स का आविष्कार होता है। एक अजूबे यातायात के साधन के रूप में इसे अद्‌भुत सफलता मिलती है।

1839 : स्काटलैंड का किर्टपैट्रिक मैकमिलन पिछले पहिये में ट्रेडिल और क्रैंक जोड़कर पहले दुपहिया वाहन का 'आविष्कार' करता है। इसे कोई कद्रदान नहीं मिलता है। मैकमिलन को अब साइकिल का आविष्कारक माना जाता है।

1863 : अगले पहिये पर पैडिल लगाए जाते हैं। बोन-शेकर साइकिल सड़क पर आती है। विलॉसिपीड साइकिल को चलाना एक सनक बन जाती है।

1865 : त्रिज्यीय (और मरोड़ - टार्शन) वाली तीलियों से साइकिलों का भार हल्का होता है।

1869 : लोहे के टायरों की जगह साइकिलों में ठोस रबर के टायर लगाए गए। 'बाइसिकिल' शब्द पहली बार उपयोग किया गया।

1870 : त्रिज्यीय तीलियों की जगह स्पर्शरेखीय तीलियां लगती हैं। उसके बाद से कोई बड़ा परिवर्तन नहीं।

1872 : इंग्लैंड में टॉल–औडिनरी या पेनी–फारदिंग साइकिल बनी।

1888 : जे.के. स्टारले ने 'रोवर' सुरक्षित साइकिल का आविष्कार किया।

1889 : हवा से भरे टायर पहली बार उपयोग किए गए। साइकिल का बुनियादी विकास संपूर्ण हुआ।

1896 : कोस्टर–ब्रेकों का आविष्कार हुआ।

1899 : एक मील प्रति मिनट की सीमा तोड़ी गई। मर्फी ने एक मील की दूरी 57.75 सेकंड में पूरी की।

1903 : साइकिल मिस्त्री ओरविल और विल्बर राईट ने हवाई जहाज का 'आविष्कार' किया।

1965 : पर्यावरण संरक्षण अभियान और शरीर को स्वस्थ रखने वालों ने साइकिल के महत्व को पहचाना और साइकिलों की बिक्री में जोरदार बढ़त हुई।

1972 : अमरीका में पहली बार मोटरकारों की तुलना में साइकिलें अधिक बिकीं।

1980 : थालीनुमा 'डिस्क' पहियों को रेसिंग साइकिलों में लगाया गया। इनमें अलग–अलग तीलियां न होने के कारण हवा का प्रतिरोध कम होता था।

1985 : साइकिलों की रफ्तार 150 मील प्रति घंटे से अधिक हुई। जौन हावर्ड ने 152.28 मील प्रति घंटे की रफ्तार का रिकार्ड कायम किया।

भारत ज्ञान विज्ञान समिति